बिगुल पुस्तिका–5

मेहनतकशों के ख़ून से लिखी

पेरिस कम्यून की अमर कहानी

राहुल फ़ाउण्डेशन

लखनऊ

ISBN 978-81-87728-11-5

मूल्य : रु. 10.00

पहला संस्करण : जनवरी, 2002
दूसरा पुनर्मुद्रण : जनवरी, 2008

प्रकाशक : **राहुल फ़ाउण्डेशन**
69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज,
लखनऊ–226 006 द्वारा प्रकाशित

आवरण : **रामबाबू**

टाइपसेटिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फ़ाउण्डेशन

मुद्रक : क्रिएटिव प्रिण्टर्स, 628/एस–28, शक्तिनगर, लखनऊ

Paris Commune ki Amar Kahani

प्रस्तावना

18 मार्च, 1871 को फ्रांस की राजधानी पेरिस में इतिहास में पहली बार मजदूरों ने अपनी हुकूमत कायम की। मजदूर वर्ग के इस साहसिक कारनामे से फ्रांस ही नहीं समूची दुनिया के पूंजीपतियों के कलेजे दहल उठे। उन्होंने मजदूरों के इस पहले राज्य का गला घोंट देने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा दिया और आखिरकार उन्होंने कम्यून को खून की नदियों में डुबो दिया।

हालांकि पेरिस कम्यून सिर्फ 72 दिनों तक कायम रह सका लेकिन इस दौरान उसने समाजवादी राज्य का एक छोटा सा मॉडल पेश किया कि किस तरह शोषण-उत्पीड़न, भेदभाव-गैरबराबरी से मुक्त समाज कायम करना कोरी कल्पना नहीं है। पेरिस कम्यून के पराजय ने भी दुनिया के मजदूर वर्ग को बेशकीमती सबक सिखाये। इन सबकों को आत्मसात करके ही सर्वहारा क्रान्तियों की अगली कड़ियों का निर्माण सम्भव हो सका था। आज भी, विश्व सर्वहारा क्रान्तियों के नये चक्र में, नई मजदूर क्रान्ति की राह को पेरिस कम्यून की मशाल रोशन करती रहेगी।

पेरिस कम्यून का इतिहास क्या था, उसके सबक क्या हैं—यह जानना आम मजदूर आबादी के लिए बेहद जरूरी है। 'बिगुल' पुस्तिका की यह कड़ी इसी जरूरत को पूरा करने की एक कोशिश है। पुस्तिका में संकलित लेख मजदूरों के क्रान्तिकारी अखबार 'नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक बिगुल' और क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों की पत्रिका 'दायित्वबोध' से लिये गये हैं। उम्मीद है कि यह पुस्तिका पेरिस कम्यून के इतिहास और उसकी विरासत से परिचित कराने में उपयोगी साबित होगी।

—सम्पादक, 'बिगुल'

अनुक्रम

मेहनतकशों के खून से लिखी पेरिस कम्यून की
अमर कहानी 5

नई मजदूर क्रान्ति की राह भी रौशन करती रहेगी
पेरिस कम्यून की मशाल ! 19

पेरिस कम्यून की महान शिक्षाएं 21

कैसे पहुंची पेरिस कम्यून की चिंगारी
चियापास की पहाड़ियों में 29

परिशिष्ट

'कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र' और हमारा समय 34

मेहनतकशों के ख़ून से लिखी पेरिस कम्यून की अमर कहानी

वैसे तो प्रेरणा और सबक लेने के लिए हमेशा ही पीछे मुड़कर इतिहास के पन्ने पलटने होते हैं, पर इतिहास की शिक्षाएं खासतौर पर उस दौर में हमारे लिए बेहद जरूरी हो जाती हैं, जब हम हार और ठहराव का सामना कर रहे होते हैं।

आज जब एक बार फिर दुनिया के पैमाने पर पूंजीवादी ताकतें अन्तरराष्ट्रीय मजदूर वर्ग और व्यापक जनता पर हावी हो गई हैं, शुरुआती समाजवादी क्रान्तियां वक्ती तौर पर असफल हो चुकी हैं, तो श्रम और पूंजी के बीच की जिन्दगी-मौत की जंग के अगले चक्र की तैयारी के दौर में **पेरिस कम्यून** को याद करने की खास अहमियत है।

आज से 128 वर्षों पहले, 18 मार्च, 1871 को फ्रांस की राजधानी पेरिस में पहली बार मजदूरों ने अपनी हुकूमत कायम की। यह धारणा चकनाचूर हो गयी कि मेहनतकश हुकूमत नहीं चला सकते। पेरिस के जांबाज मजदूरों ने न सिर्फ पूंजीवादी हुकूमत की चलती चक्की को उलटकर तोड़ डाला, बल्कि 72 दिनों के शासन के दौरान आने वाले दिनों का एक छोटा-सा मॉडल भी पेश कर डाला कि समाजवादी समाज में भेदभाव, गैरबराबरी और शोषण को किस तरह समाप्त किया जायेगा। आगे चलकर, 1917 की रूसी क्रान्ति ने इसी कड़ी को आगे बढ़ाया।

पेरिस कम्यून की ऐतिहासिक महत्ता और उसकी असफलता के कारणों की गहरी जांच-पड़ताल के बाद वैज्ञानिक समाजवाद के आविष्कारक **मार्क्स** और **एंगेल्स** ने अपने सिद्धान्तों में कई महत्वपूर्ण बातें जोड़ीं।

पेरिस कम्यून ने सर्वहारा वर्ग का कामयाब क्रान्तिकारी संघर्ष छेड़ने और राजकाज चलाने के बेशकीमती अनुभव दिये। वह असफल हो गई, क्योंकि मजदूर यह अनुमान लगाने से चूक गये कि पहली सर्वहारा सत्ता को कुचलने के लिए पूरा "बूढ़ा यूरोप" एक हो जायेगा, जैसाकि मार्क्स ने पहले ही चेतावनी दी थी। पेरिस के जांबाज इंकलाबी मजदूरों की एक वैज्ञानिक विचारधारा से लैस इंकलाबी पार्टी तब तक अस्तित्व में नहीं आ सकी थी, इसके बावजूद उन्होंने उन चन्द दिनों के भीतर **सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का–सर्वहारा सत्ता का–सर्वहारा जनतंत्र** का एक ऐसा उदाहरण पेश किया, जो सदियों तक मेहनतकशों की राह रौशन करता रहेगा।

•

महान पेरिस कम्यून की कहानी हम थोड़ा पहले से, एक भूमिका के साथ शुरू करें तो बेहतर रहेगा।

पिछली सदी के मध्य में यूरोप में कल-कारखानों का तेज विकास हो रहा था। पूंजीवादी औद्योगिक क्रान्ति तेजी से आगे डग भर रही थी। इसके साथ ही संगठित औद्योगिक मजदूर वर्ग की ताकत और चेतना बढ़ती जा रही थी। ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी के मजदूर अपने शोषण के विरुद्ध संघर्ष को ज्यादा से ज्यादा संगठित रूप में चलाने लगे थे।

मजदूरों की मुक्ति और समाजवाद के विभिन्न विचार भी पैदा हो चुके थे और मजदूर उनके प्रभाव में थे। पर सबसे बड़ी प्रगति तब सामने आई जब **मार्क्सवाद** का जन्म हुआ। मजदूरों के पहले अन्तरराष्ट्रीय संगठन **'कम्युनिस्ट लीग'** के घोषणापत्र के रूप में 1848 में **मार्क्स** और **एंगेल्स** ने अपनी ऐतिहासिक रचना **'कम्युनिस्ट घोषणापत्र'** लिखी। 1865 में **'इण्टरनेशनल वर्किंगमेंस एसोसियेशन'** (पहला इण्टरनेशनल) का गठन हुआ, जिसने पूरे यूरोप के मजदूर आन्दोलन को जबर्दस्त रूप से प्रभावित किया। 1868 में मार्क्स की अमर रचना **'पूंजी'** के प्रकाशित होने तक मार्क्स और एंगेल्स के विचार (वैज्ञानिक समाजवाद) मजदूर आन्दोलन में व्याप्त तमाम काल्पनिक समाजवादी, सुधारवादी और अराजकतावादी विचारों को पीछे ढकेल चुके थे। पर अफसोस की बात थी कि फ्रांस के मजदूर आन्दोलन में मार्क्स के अनुयायी अभी कम थे। वहां अराजकतावादी विचारों का काफी प्रभाव था, जिनके चलते पेरिस कम्यून को आगे चलकर घातक नुकसान भी उठाना पड़ा।

जुलाई 1870 में फ्रांस और प्रशा के बीच युद्ध छिड़ गया। दोनों देशों के पूंजीवादी शासक वर्ग इसकी पहले से ही गुपचुप तैयारी कर रहे थे। "लहू और लोहे" के बल पर जर्मनी को एक करने पर तुला हुआ **बिस्मार्क** फ्रांस के लोहे की खानों से समृद्ध और सैनिक महत्व वाले एल्सास और लोरेन प्रदेशों को दखल करना चाहता था और फ्रांस का शासक **नेपोलियन तृतीय** सोचता था कि दूसरे देशों से जंग जीतकर वह अपने अन्दरूनी राजनीतिक संकट पर काबू पा लेगा।

युद्ध छिड़ते ही दोनों देशों में अन्धराष्ट्रवादी और पूंजीवादी राष्ट्रभक्ति की भावनाओं का ज्वार उमड़ पड़ा। केवल प्रथम इण्टरनेशनल ने मार्क्स की रहनुमाई में, दोनों देशों के मजदूरों का आह्वान किया कि अन्धराष्ट्रवादी भावनाओं में बहने तथा युद्धोन्माद पैदा करने वाले पूंजीवादी प्रचार के धोखे में आने के बजाय वे सैन्यवाद का मुकाबला करें।

बहरहाल, भ्रष्टाचार और कुशासन से जर्जर नेपोलियन तृतीय की सत्ता, सितम्बर 1870 में प्रशा से पराजय के तत्काल बाद, भरभराकर ढह गई और पेरिस में जनतंत्र की घोषणा की गई।

पर वास्तविकता यह थी कि इस जनतंत्र पर पूरी तरह बड़े पूंजीपति काबिज थे

जो जागृत मेहनतकशों से आतंकित थे। इस नई सरकार के सामने आर्थिक रूप से जर्जर फ्रांस को बचाने के दो ही रास्ते थे–या तो दुश्मन के सामने वह आत्मसमर्पण कर दे या अवाम को हथियारबन्द करके राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध संगठित करे। पूंजीपतियों की वफादार सरकार ने बेधड़क पहला रास्ता चुना क्योंकि सशस्त्र अवाम से वह पहले से ही बेहद खौफजदा था। सरकार के इस कदम से नफरत से भरी हुई जनता उसे "राष्ट्रीय दगाबाजी की सरकार" कहने लगी।

जनवरी 1871 में पेरिस ने आत्मसमर्पण किया। फ्रांसीसी सरजमीन पर, वर्साय में, जर्मन बादशाह के साम्राज्य की घोषणा हुई और प्रशा का राजा ही पहला जर्मन बादशाह बना। 28 फरवरी की शांति संधि में 5 अरब फ्रांक के जुर्माने के साथ ही पूरा अल्सास और लोरेन प्रदेश फ्रांस ने शत्रु को दे दिया। फरवरी, 1871 में हुए चुनाव के बाद घोर प्रतिक्रियावादी **थियेर** फ्रांसीसी सरकार का प्रमुख बना।

युद्ध के दौरान बने सैन्यदल **'नेशनल गार्ड्स'** में मुख्यतः मजदूर ही शामिल थे। हथियारबन्द मजदूरों से भयभीत पूंजीपतियों का कुत्ता थियेर 'नेशनल गार्ड्स' में शामिल मजदूरों की बन्दूकें ले लेना चाहता था, क्योंकि उसे डर था कि वे कभी भी पूंजीपतियों पर हमला बोल सकते हैं।

1 मार्च, 1871 को भिनसारे ही थियेर सरकार ने अपनी फौजों को हुक्म दिया कि वे पेरिस के सभी मजदूरों से सारे हथियार वसूल लें। मगर फौजें इस हुक्म की तामीली में नाकाम रहीं। पेरिस की तमाम मेहनतकश आबादी सड़कों पर उतर आई। दो सैनिक जनरल मार डाले गये। सेना जनता से मिल गई। थियेर वर्साय भाग गया और वहां से 'नेशनल असेम्बली' की घोषणा करने लगा।

इसके बाद, पेरिस के मजदूरों ने आम चुनाव की एक तिथि तय की और 26 मार्च को सत्ता के सर्वोच्च अंग की हैसियत से कम्यून निर्वाचित हो गया। 28 मार्च को नगर भवन के सामने आम सभा हुई और उसमें कम्यून की घोषणा हुई। **इतिहास में पहली बार मजदूर वर्ग सत्तासीन हुआ।**

●

दुनिया की इस पहली मजदूर सरकार की स्थापना पूंजीवादी राज्य की नौकरशाही को पूरी तरह भंग करके सच्चे सार्विक मताधिकार के बाद हुई, जिसके चलते दर्जी, नाई, मोची, प्रेस मजदूर–ये सभी कम्यून के सदस्य चुने गये। कम्यून को कार्यपालिका और विधायिका, यानी सरकार और संसद–दोनों का ही काम करना था। पुरानी पुलिस और सेना को भंग कर दिया गया और पूरी मेहनतकश जनता को शस्त्र-सज्जित करने का काम शुरू किया गया। सत्तासीन होने के महज दो दिन बाद ही पुरानी सरकार के सभी बदनाम कानूनों को कम्यून ने रद्द कर दिया।

अक्टूबर 1870 से लेकर अप्रैल 1871 तक का सारा किराया रद्द कर दिया गया। गिरवी रखी गई चीजों की उधार दफ्तर द्वारा नीलामी बन्द कर दी गयी। सूदखोरी

जोशो-खरोश और उल्लासभरे माहौल में होटल द विल के बाहर चौक में
पेरिस कम्यून के गठन की घोषणा

पर रोक लग गई।

कम्यून ने पहली बार वास्तविक धर्मनिरपेक्ष जनवाद को साकार करते हुए यह घोषणा की कि धर्म हर आदमी का निजी मामला है और राज्य या सरकार को इससे एकदम अलग रखा जायेगा। नतीजतन, चर्च को सत्ता से अलग कर दिया गया। धार्मिक रीतियों पर पैसे की फिजूलखर्ची पर रोक लग गई। चर्च की सम्पत्ति को राष्ट्र की सम्पत्ति घोषित कर दिया गया। शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक चिह्नों, तस्वीरों और पूजा-प्रार्थना पर रोक लगा दी गयी।

कम्यून में विदेशी भी चुनकर आये थे क्योंकि कम्यून का मानना था कि सभी देशों के मेहनतकश भाई-भाई हैं। यही सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयतावाद का सिद्धान्त है। कम्यून ने यह घोषणा की कि "कम्यून का झण्डा विश्व गणराज्य का झण्डा है।" कम्यून अन्धराष्ट्रवाद, विस्तारवाद और राष्ट्रों के बीच युद्ध का विरोधी था। नेपोलियन द्वारा स्थापित विजय-स्तम्भ को इसीलिए ढहा दिया गया कि वह अन्धराष्ट्रवाद, विस्तारवाद और सैन्यवाद का प्रतीक था। 6 अप्रैल को 'नेशनल गार्ड्स' की 137वीं बटालियन ने उस बदनाम गिलोटीन को बाहर निकालकर सार्वजनिक तौर पर जला दिया जिससे गत 75 वर्षों के भीतर सैकड़ों लोगों को मृत्युदण्ड दिया गया था। यह बुर्जुआ राज्यसत्ता के आतंक के नाश का प्रतीक था।

कम्यून में महत्वपूर्ण से महत्वपूर्ण ओहदे और जिम्मेदारी वाले व्यक्ति को भी कोई विशेषाधिकार नहीं हासिल था। मजदूर और अफसरों-मंत्रियों के तनख्वाहों के भीतर पूंजीवादी हुकूमत के दौरान जो आकाश-पाताल का अन्तर था, उसे खतम कर दिया गया। अप्रैल में यह आज्ञप्ति जारी हुई कि किसी भी अधिकारी को 6,000 फ्रैंक सालाना से अधिक तनख्वाह नहीं मिलेगी।

यह रकम फ्रांस के एक कुशल मजदूर की सालाना आमदनी के बराबर थी। इसके साथ ही, न्यूनतम तनख्वाह 800 फ्रैंक सालाना से बढ़ाकर 1200 फ्रैंक कर दी गयी। अधिकारियों के एक से अधिक पदों का काम करने की एवज में किसी तरह का अतिरिक्त पारिश्रमिक या भत्ता पाने पर रोक लगा दी गयी। कम तनख्वाह वाले कर्मचारियों के जीवनयापन को सुगम बनाने के लिए तनख्वाहों से होने वाली सभी कटौतियों और अर्थदण्डों पर भी रोक लगा दी गयी।

कम्यून के कई सदस्यों ने आगे बढ़कर मिसाल पेश करने के लिए अपने मंजूर वेतन-भत्ते और सुविधाओं को भी छोड़ने का काम किया।

16 अप्रैल को कम्यून ने उन सभी कारखानों को फिर से शुरू करने का आदेश दिया, जिन्हें उनके मालिक बन्द करके भाग गये थे। इन कारखानों के मजदूरों को कोआपरेटिव बनाने की सलाह दी गयी। ब्रेड बनाने वाले कारखानों में रातभर काम करने का चलन रोक दिया गया। रोजगार दफ्तर को बन्द कर दिया गया क्योंकि ये दलालों के कब्जे में थे जो मजदूरों का घिनौना शोषण करते थे।

पेरिस कम्यून ने सरकार चलाने के काम को "रहस्यमय", "विशिष्ट" और "महाविद्वानों" के काम के बजाय सीधे-सीधे एक मजदूर के कर्तव्य में बदल दिया। राज्य के पदाधिकारी "विशेष औजारों से" काम करने वाले मजदूरों से अधिक कुछ भी नहीं थे।

पेरिस कम्यून में आम मेहनतकश जनसमुदाय वास्तविक स्वामी और शासक था। जब तक कम्यून कायम रहा, जन समुदाय व्यापक पैमाने पर संगठित था और सभी अहम राजकीय मामलों पर लोग अपने-अपने संगठनों में विचार-विमर्श करते थे। प्रतिदिन क्लब-मीटिंगों में करीब 20,000 ऐक्टिविस्ट हिस्सा लेते थे। कम्यून न सिर्फ इन बैठकों

के नतीजों, सुझावों पर, बल्कि यूरोप के अन्य हिस्सों तथा प्रथम इण्टरनेशनल की विभिन्न शाखाओं से प्राप्त सुझावों पर भी विचार-विमर्श करता था। जनसमुदाय की चौकसी और आलोचना को कम्यून के सदस्य पूरी-पूरी तरजीह देते थे।

कम्यून ने जो ऐतिहासिक कदम उठाये, उन्हें लेकर वह बहुत दूर तक आगे नहीं चल सका। अपने जन्म से ही वह दुश्मनों से घिरा हुआ था, जो उसे नेस्तनाबूद करने पर तुले हुए थे। ('कम्युनिस्ट घोषणापत्र' के शब्दों के अनुसार) बूढ़े यूरोप को **"कम्युनिज्म का जो हौवा"** 1848 में ही सता रहा था, उसे साक्षात पेरिस में खड़ा देखकर यूरोप के सभी देशों के पूंजीपतियों के कलेजे दहल उठे थे। कम्यून को कुचलने के लिए सभी प्रतिक्रियावादी ताकतें एकजुट हो गई थीं।

पेरिस के मजदूरों के विद्रोह के ठीक पूर्व **मार्क्स** और **एंगेल्स** का यह आकलन था कि अभी इसके लिए परिस्थितियां पूरी तरह तैयार नहीं हैं। अतः उनका सुझाव था कि क्रान्ति कुछ और तैयारियों के बाद शुरू की जानी चाहिये। पर एक बार जब पेरिस कम्यून अस्तित्व में आ गया तो उन्होंने उसका क्रान्तिकारी अभिनन्दन और पुरजोर समर्थन किया।

मार्क्स ने समाजवाद के उस शिशु मॉडल का अत्यन्त बारीकी से अध्ययन किया जो पेरिस के मजदूरों ने अपनी पहलकदमी और सामूहिक रचनात्मकता से खड़ा किया था। इसके साथ ही मार्क्स कम्यून के भविष्य को लेकर लगातार बहुत अधिक चिन्तित थे और अपने सम्पर्कों तथा **इण्टरनेशनल** की फ्रांस शाखा के जरिये कम्यून को लगातार अपने सुझाव दे रहे थे।

मार्क्स यह स्पष्ट समझ रहे थे कि पेरिस कम्यून को कुचलने के लिये बिस्मार्क की जो प्रशियाई फौजें पेरिस के शहरपनाह के पास ही खड़ी थीं, वे या तो थियेर को मदद करतीं या फिर खुद ही पेरिस की ओर कूच कर देतीं। इसलिए वे लगातार राय दे रहे थे कि पेरिस कम्यून की जीत को पुख्ता करने के लिए जरूरी है कि पेरिस की कामगारों की सेना पेरिस में प्रतिक्रान्ति की हर कोशिश को कुचलकर बिना रुके वर्साय की ओर कूच कर जाये जो थियेर सरकार के साथ ही पेरिस के सभी रईसों का पनाहगाह बना हुआ था। उनका कहना था कि इससे कम्यून की जीत और पुख्ता हो जाती और सर्वहारा क्रान्ति पूरे देश में फैलायी जा सकती थी। यह भेद बाद में खुला कि थियेर के पास उस समय कुल जमा 27 हजार पस्तहिम्मत फौजी थे, जिन्हें पेरिस के एक लाख 'नेशनल गार्ड्स' चुटकी बजाते धूल चटा सकते थे।

पर पेरिस कम्यून के बहादुर कम्यूनार्ड यहीं पर चूक गये। उन्होंने पेरिस में तो मजदूर वर्ग की फौलादी सत्ता कायम की और बुर्जुआ वर्ग के साथ कोई रू-रियायत नहीं बरती, लेकिन वे भूल गये कि पेरिस के बाहर थियेर के पीछे सिर्फ फ्रांस के ही नहीं, बल्कि पूरे यूरोप के प्रतिक्रियावादी एकजुट हो रहे हैं। मार्क्स ने कम्यून के प्रमुख नेताओं—**फ्रांकेल** और **वाल्यां** को आगाह किया कि पेरिस को घेरने के लिए थियेर और

प्रशियाइयों के बीच सौदेबाजी हो सकती है, अतः प्रशियाई लश्करों को पीछे धकेलने के लिए मोंतमार्त्र की उत्तरी पाख की किलेबन्दी कर लेनी चाहिये। मार्क्स इस बात को लेकर बहुत चिन्तित थे कि कम्यून वाले अपने को महज बचाव ही बचाव तक सीमित रखकर बेशकीमती समय गंवा रहे हैं और वर्साय वालों को अपने सैन्यबल की किलेबन्दी कर लेने का मौका दे रहे हैं। उन्हों कम्यूनार्डों को लिखा कि **प्रतिक्रियावादी की मांद को ध्वस्त कर डालिये, फ्रांसीसी राष्ट्रीय बैंक के खजाने जब्त कर लीजिए और क्रान्तिकारी पेरिस के लिए प्रान्तों का समर्थन हासिल कीजिए।**

मार्क्स को यह भी स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि वैज्ञानिक समाजवाद के सिद्धान्तों पर गठित एक पार्टी का अभाव उन ऐतिहासिक घड़ियों में कम्यून की गतिविधियों को बुरी तरह प्रभावित कर रहा था। इंटरनेशनल की फ्रांस शाखा सर्वहारा वर्ग का राजनीतिक हरावल बनने से चूक गई थी। उसके अन्दर मार्क्सवादी विचारधारा के लोगों की संख्या भी बहुत कम थी। फ्रांसीसी मजदूरों में सैद्धान्तिक पहलू बहुत कमजोर था। उस समय तक **'कम्युनिस्ट घोषणापत्र', 'फ्रांस में वर्ग संघर्ष', 'पूंजी'** आदि मार्क्स की प्रमुख रचनायें अभी फ्रांसीसी भाषा में प्रकाशित भी नहीं हुई थीं।

कम्यून के नेतृत्व में बहुतेरे ब्लांकीवादी और प्रूधोंवादी शामिल थे, जो मार्क्सवादी सिद्धान्तों से या तो परिचित ही नहीं थे, या फिर उसके विरोधी थे। आम सर्वहाराओं द्वारा आगे ठेल दिये जाने पर उन्होंने सत्ता हाथ में लेने के बाद बहुतेरी चीजों को सही ढंग से अंजाम दिया और आने वाली सर्वहारा क्रान्तियों के लिए बहुमूल्य शिक्षायें दीं, पर अपनी राजनीतिक चेतना की कमी के कारण उन्होंने बहुतेरी गलतियां भी कीं।

कम्यूनार्डों की एक अहम गलती यह थी कि वे दुश्मन की शान्तिवार्ताओं की धोखाधड़ी के शिकार हो गये और दुश्मन ने इस बीच युद्ध की तैयारियां मुकम्मिल कर लीं। दुश्मन का पूरी तरह सफाया न करना, वर्साय पर हमला न करना, और क्रान्ति को पूरे देश में न फैलाना कम्यून वालों की सबसे बड़ी भूल थी और सच यह है कि नेतृत्व में मार्क्सवादी विचारधारा के अभाव के चलते यह गलती होनी ही थी।

"जब वर्साय अपने छुरे तेज कर रहा था, तो पेरिस मतदान में लगा हुआ था; जब वर्साय युद्ध की तैयारी कर रहा था तो पेरिस वार्ताएं कर रहा था।" फलतः 1871 की मई आते-आते थियेर के सैनिकों ने पेरिस पर हमला बोल दिया। वर्साय के लुटेरों की भाड़े की सेना का कम्युनार्डों ने जमकर मुकाबला किया और एकबारगी तो उसे पीछे भी धकेल दिया, पर वर्साय की सेना पेरिस की घेरेबन्दी करके गोलाबारी करती रही। इसी दौरान प्रशा ने फ्रांस के बन्दी बनाये गये दसियों हजार सैनिकों को रिहा कर थियेर की भारी मदद की थी। थियेर की सेना दक्षिणी मोर्चे के दो किलों को जीतकर पेरिस की दहलीज पर पहुंच गई। प्रशा की सेना ने भी आगे बढ़ने में उनकी परोक्ष मदद की। 21 मई 1871 को वर्साय का दस्युदल अपने कसाइयों के छुरों के साथ पेरिस में घुस पड़ा। शहर की सड़कों-चौराहों पर और विशेषकर मजदूर बस्तियों में

घमासान युद्ध हुआ। आखिरकार, 8 दिनों के बेमिसाल बहादुराना संघर्ष के बाद पेरिस के बहादुर सर्वहारा योद्धा पराजित हो गये। इस खूनी सप्ताह में 26,000 कामगार कम्यून की रक्षा करते हुए शहीद हो गये। विजयी प्रतिक्रियावादियों ने सड़कों पर दमन का जो ताण्डव किया, वह बेमिसाल था। नागरिकों को कतारों मे खड़ाकर, हाथों के घट्ठों को देखकर कामगारों को अलग करके गोली मार दी जाती थी। गिरफ्तार लोगों के अतिरिक्त चर्च में शरण लिये लोगों और अस्पतालों में घायल पड़े सैनिकों को भी गोली मार दी गयी। उन्होंने बुजुर्ग मजदूरों को यह कहते हुए गोली मार दी कि 'इन्होंने बार-बार बगावतें की हैं और ये खांटी अपराधी हैं।' औरत-मजदूरों को यह कहकर गोली मार दी गई कि ये "स्त्री अग्नि बम" हैं और यह कि ये "सिर्फ मरने के बाद ही" औरतों जैसी लगती हैं। बाल मजदूरों को यह कहकर गोली मार दी गई कि "ये बड़े होकर बागी बनेंगे।" यह नरंसहार पूरे जून के महीने चलता रहा। पेरिस लाशों से पट गया। सैन नदी खून की नदी बन गयी। कम्यून खून के समन्दर में डुबो दिया गया। कम्यूनार्डों के रक्त से इतिहास ने मजदूरों के लिए यह कड़वी शिक्षा लिखी कि **सर्वहारा वर्ग को क्रान्ति को अन्त तक चलाना होगा। सत्ता न तो शान्तिपूर्वक मिलेगी, न ही शान्तिपूर्वक उसकी हिफाजत की जा सकेगी। कम्यून की यह शिक्षा थी कि भागते हुए डकैतों का अन्त तक पीछा किया जाना चाहिये, पानी में डूबते चूहों को तैरकर किनारे आने का मौका नहीं देना चाहिये, दुश्मन को फिर से दम नहीं हासिल करने देना**

दुनिया के पहले मजदूर राज्य की रक्षा के लिए कम्युनार्ड आखिरी दम तक जी-जान से लड़ते रहे।

चाहिये और तब तक चैन की सांस नहीं लेनी चाहिये जब तक पूंजीवादी दुश्मन कहीं किसी भी कोने-अंतरे में जीवित हो। पेरिस कम्यून के बाद भी, विश्व इतिहास में मजदूर वर्ग जब-जब इन शिक्षाओं को भूला, तब-तब उसे शिकस्त मिली। काउत्स्की, अलब्राउडर, टीटो, ख्रुश्चेव और देङ सियाओ-पिङ विश्व सर्वहारा की क्रान्तिकारी सतर्कता को कमजोर करते हुए यह बताने की कोशिश करते रहे कि बुर्जुआ वर्ग को समझा-बुझाकर, चुनाव में हराकर, जनमत का दबाव बनाकर सर्वहारा वर्ग सत्ता ले सकता है। इसीलिए वे गद्दार थे, समाजवादी मुखौटे वाले पूंजीवादी थे, संशोधनवादी थे, पूंजीवादी राह के राही थी। भारत में भी **भाकपा, माकपा, भाकपा (मा-ले)** और तमाम ऐसे चुनावी वामपन्थी ऐसे ही रंगे सियार हैं।

●

पेरिस कम्यून के शहीदों ने अपने रक्त से एक अमिट इतिहास लिख डाला, सर्वहारा वर्ग की आगे की क्रान्तियों के मार्गदर्शन के लिए उन्होंने बहुमूल्य शिक्षाएं दीं और अपनी शहादतों से रोशनी की एक मीनार खड़ी कर दी।

कम्यून के जीवनकाल में ही **कार्ल मार्क्स** ने लिखा था : "**यदि कम्यून को नष्ट भी कर दिया गया, तब भी संघर्ष सिर्फ स्थगित होगा। कम्यून के सिद्धान्त शाश्वत और अनश्वर हैं, जब तक मजदूर वर्ग मुक्त नहीं हो जाता, तब तक ये सिद्धान्त बार-बार प्रकट होते रहेंगे।**" मजदूरों की पहली हथियारबन्द बगावत और पहली सर्वहारा सत्ता की अहमियत के नजरिये से ही मार्क्स ने कहा था, **"18 मार्च का गौरवमय आन्दोलन मानव जाति को वर्ग-शासन से सदा के लिए मुक्त कराने वाला महान सामाजिक क्रान्ति का प्रभात है।"**

दुनिया भर के मजदूरों के लिए इसीलिए पेरिस कम्यून की वर्षगांठ एक त्योहार है, जैसा कि एंगेल्स ने काफी पहले, कम्यून की इक्कीसवीं वर्षगांठ के अवसर पर ही, बताया था, **"बुर्जुआ वर्ग को अपनी 14 जुलाई या 22 सितम्बर को उत्सव मनाने दो। सर्वहारा वर्ग का त्योहार तो सभी जगह हमेशा 18 मार्च ही होगा।"**

मजदूर वर्ग आज भी पेरिस कम्यून को इसी रूप में याद करता है, इसकी जरूरी शिक्षाओं से सबक लेता है और आगे डग भरने के मंसूबे बांधता है।

आइये, निचोड़ के तौर पर पेरिस कम्यून की जरूरी शिक्षाओं की संक्षिप्त चर्चा एक बार फिर कर ली जाये।

(1) पेरिस में कम्यून की पराजय के दो दिनों बाद, मार्क्स ने 30 मई , 1871 को **पहले इण्टरनेशनल** की सामान्य परिषद की बैठक में कम्यून का मूल्यांकन करते हुए एक रिपोर्ट पढ़ी। यही रिपोर्ट 'फ्रांस में गृहयुद्ध' शीर्षक प्रसिद्ध कृति है, जो आज भी हम सबके लिए एक बेहद जरूरी किताब है।

मार्क्स ने कम्यून की परिस्थितियों, कारणों और अनुभवों का निचोड़ निकालते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि **"मजदूर वर्ग बनी-बनाई राज्य मशीनरी को ज्यों का**

त्यों हाथ में नहीं ले सकता और उसे अपना मकसद पूरा करने के लिए इस्तेमाल नहीं कर सकता।" उन्होंने बताया कि सर्वहारा वर्ग को पुरानी राज्य मशीनरी को "तोड़ने" और "चकनाचूर करने के लिए" क्रान्तिकारी हिंसा का इस्तेमाल करना चाहिये तथा **"सर्वहारा अधिनाकत्व को लागू करना चाहिए।"**

इस तरह मार्क्स और एंगेल्स ने पेरिस कम्यून के अनुभवों के आधार पर क्रान्ति के विज्ञान में एक महत्वपूर्ण इजाफा किया, जैसा कि लेनिन ने बताया था कि **मार्क्सवादी वह नहीं है जो सिर्फ वर्ग-संघर्ष को मानता है, बल्कि वह है जो वर्ग-संघर्ष के साथ सर्वहारा अधिनायकत्व को भी मानता है।**

मार्क्स ने बुर्जुआ और सर्वहारा राज्यसत्ता के प्रश्न पर जो मौलिक विचार रखा तथा लेनिन ने जिसे आगे बढ़ाया, उसका स्पष्ट प्रस्थान बिन्दु पेरिस कम्यून की शिक्षाओं से ही होता है। मार्क्स ने यह स्पष्ट किया कि **"सर्वहारा अधिनायकत्व का पहला अवयव सर्वहारा वर्ग की सेना है। मजदूर वर्ग को अपनी मुक्ति का अधिकार युद्धभूमि में प्राप्त करना चाहिये।"**

पेरिस कम्यून की असफलता का निचोड़ निकालते हुए मार्क्स और एंगेल्स ने यह और अधिक स्पष्ट किया कि सर्वहारा वर्ग की सत्ता शस्त्रबल से हासिल होती है और इसी के सहारे कायम रह सकती है। यह तभी कायम रह सकती है जबकि बुर्जुआ वर्ग की सत्ता को ध्वस्त करने के बाद भी उसे सम्भलने का मौका न दिया जाये और उसके समूल नाश के लिए जंग जारी रखी जाये।

आज भी यह सच है कि सर्वहारा वर्ग को आर्थिक मांगों और राजनीतिक अधिकारों के लिए संघर्ष करते हुए पूंजीवादी व्यवस्था की असलियत तथा अपने ऐतिहासिक मिशन को समझने में चाहे जितना भी समय लगे, चाहे वह संघर्ष के तमाम रूपों के साथ ही प्रचार और भंडाफोड़ के लिए कानूनी संघर्षों का इस्तेमाल तथा चुनावों का 'टैक्टिकल' इस्तेमाल भी क्यों न करे, अन्तिम फैसला बल-प्रयोग से, सशस्त्र क्रान्ति से ही होगा और वह क्रान्ति तभी टिकी रहेगी, जब दुश्मनों पर सर्वतोमुखी अधिनायकत्व कायम हो। आगे चलकर लेनिन के नेतृत्व में रूस की समाजवादी क्रान्ति ने इसी शिक्षा को साकार किया। चीन में भी 1949 में यही हुआ और फिर 1966 से 1976 के बीच **महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति** के दौरान माओ ने पेरिस कम्यून और अक्टूबर क्रान्ति की सर्वहारा अधिनायकत्व सम्बन्धी शिक्षाओं को आगे बढ़ाते हुए यह निष्कर्ष दिया कि **समाजवाद तभी टिका रह सकता है जबकि बुर्जुआ वर्ग पर चौतरफा सर्वहारा अधिनायकत्व कायम रखते हुए क्रान्ति को लगातार जारी रखा जाये।**

इसीलिए सर्वहारा क्रान्तिकारियों का मानना है कि विश्व सर्वहारा क्रान्ति की विजय यात्रा के तीन सबसे महत्वपूर्ण मील के पत्थर हैं–**पेरिस कम्यून, अक्टूबर 1917 की रूसी क्रान्ति** और **चीन की सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति।**

(2) सर्वहारा वर्ग के महान शिक्षक **मार्क्स और एंगेल्स ने पेरिस कम्यून में जन**

समुदाय की क्रान्तिकारी पहलकदमी को विशेष महत्व दिया। कम्यून के अनुभव हमें बताते हैं कि सर्वहारा क्रान्ति और सर्वहारा अधिनायकत्व की विजय के लए जरूरी है कि लाखों-करोड़ों जनसमुदाय की क्रान्तिकारी सक्रियता पर भरोसा रखा जाये और जनसमुदाय की इतिहास का निर्माण करने की महान शक्ति को पूर्ण रूप से उजागर किया जाये।

नकली वामपन्थी जनता से डरते हैं और चाहते हैं कि वह सोई रहे। अतिवामपन्थी दुस्साहसवादी लाइन को मानने वाले लोग जनता को मूढ़मति मानते हैं और खुद को उनका बुद्धिमान और बहादुर उद्धारक! क्रान्तिकारी जनदिशा बताती है कि व्यापक मेहनतकश जनता की शक्ति और बुद्धिमत्ता में भरोसा करके उसे जागृत, गोलबन्द और संगठित किया जाना चाहिये।

पेरिस कम्यून में शामिल मेहनतकशों ने राजकाज चलाकर, बेहद महत्वपूर्ण व मौलिक फैसले लेकर अपार सर्जनात्मकता का परिचय दिया था। यदि उनका मार्गदर्शन करने वाली सही विचारधारा से लैस एक क्रान्तिकारी पार्टी होती तो यह प्रयोग आगे बढ़ सकता था। पर अपने छोटे से जीवन में भी कम्यून ने यह तो साबित ही कर दिखाया कि पुरानी दुनिया को खाक में मिलाने के बाद व्यापक मेहनतकश अवाम की सामूहिक शक्ति और सामूहिक मेधा एक नई दुनिया का भी ढांचा खड़ा कर सकती है, एक नये जीवन का भी ताना-बाना बुन सकती है।

(3) मार्क्स और एंगेल्स ने पेरिस कम्यून का सार-संकलन करते हुए यह नतीजा निकाला था कि, **"सम्पत्तिवान वर्गों की संयुक्त सत्ता के खिलाफ अपने संघर्ष में मजदूर वर्ग अपने को, सम्पत्तिवान वर्गों द्वारा स्थापित तमाम पुरानी पार्टियों के विरुद्ध और उनसे भिन्न, एक राजनीतिक पार्टी में संगठित करके ही, एक वर्ग की हैसियत से कार्रवाई कर सकता है।"**

जैसा कि पहले भी बताया जा चुका है, पेरिस कम्यून की असफलता का बुनियादी कारण यह था कि उस समय की ऐतिहासिक परिस्थितियों में मार्क्सवाद मजदूर आन्दोलन की मार्गदर्शक विचारधारा के रूप में अभी स्थापित नहीं हो पाया था और ऐसी एक सर्वहारा क्रान्तिकारी पार्टी अभी स्थापित नहीं हो पायी थी जिसकी विचारधारा मार्क्सवाद हो। ऐसी स्थिति में पेरिस कम्यून की असफलता एक ऐतिहासिक नियति थी। एक क्रान्तिकारी पार्टी के अभाव और कम्यून में **ब्लांकी** और **प्रूधों** के गलत विचारों को मानने वालों के प्रमुख स्थान पर होने के कारण ही **माओ** ने एक बार कहा था कि कम्यून यदि जीवित भी रह जाता तो (विचारधारा और पार्टी के अभाव में) एक प्रतिक्रियावादी कम्यून बन जाता। बहरहाल, कम्यून की असफलता की ऐतिहासिक नियति ने ही आगे की सर्वहारा क्रान्तियों की सफलता की बुनियादी शर्त पैदा की।

मार्क्स और एंगेल्स की पार्टी-विषयक शिक्षाओं को आगे बढ़ाते हुए ही लेनिन एक सही क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी का सिद्धान्त विकसित कर सके और ऐसी पार्टी खड़ी करे

बोल्शेविक क्रान्ति को सम्भव बना सके। चीन की क्रान्ति भी इसीलिए सम्भव हो सकी।

आज जब सर्वहारा वर्ग सर्वहारा क्रान्ति का नया चक्र शुरू करने की भूमिका तैयार कर रहा है तो यह बुनियादी शिक्षा उसे पूरी तरह आत्मसात कर लेनी होगी। भारत के सर्वहारा क्रान्तिकारियों और मजूदर वर्ग को भी यह शिक्षा गांठ बांध लेनी होगी कि क्रान्ति के लिए एक देशस्तर की नई, क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी खड़ी करना सर्वोपरि आवश्यकता है जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद को अपना मार्गदर्शक बनाये, इसकी सर्वव्यापी सच्चाई को अपने देश की ठोस परिस्थितियों के साथ व क्रान्तिकारी कार्यों के ठोस व्यवहार के साथ मिलाकर एक सही कार्यदिशा तय करे व उसे अमल में लाये। यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि लम्बे प्रयासों के बाद एक बार जब सही लाइन पर मजबूत पकड़ हो जाती हैऔर उसे लागू किया जाने लगता है तो कमजोर ताकत भी मजबूत और व्यापक हो जाती है तथा कुछ-कुछ खास मोड़ों पर तो ताकत में चमत्कारी बढ़ोत्तरी सभी गणनाओं-अनुमानों को पीछे छोड़ देती है। केवल तभी व्यापक मेहनतकश अवाम की ताकत के आधार पर, पार्टी के नेतृत्व में सशस्त्र शक्तियां कायम हो सकती हैं और राज्यसत्ता हासिल की जा सकती है।

(4) सत्ता हासिल करने के बाद सर्वहारा अधिनायकत्व को, राज्यतंत्र के अंगों-उपकरणों को पतित होने से कैसे रोका जाये, सर्वहारा सत्ता के केन्द्रों में नये बुर्जुआ तत्वों के पैदा होने को कैसे रोका जाये, सरकारी कामकाज के लिए प्राप्त सुविधाओं को विशेषाधिकार बनने से और नये नौकरशाह पैदा होने से कैसे रोका जाये?–इन प्रश्नों पर **लेनिन** ने काफी विचार किया था आगे चलकर **चीन की सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति** के दौरान जब राज्य और पार्टी के भीतर के पूंजीवादी पथगामियों के विरुद्ध संघर्ष हो रहा था तो माओ ने इस मसले पर विस्तृत सोच-विचार के बाद कुछ बहुमूल्य समाधान प्रस्तुत किये।

उस दौर में, यानी चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान अल्पजीवी पेरिस कम्यून द्वारा इस दिशा में उठाये गये विभिन्न मौलिक, अन्वेषणात्मक कदमों और विभिन्न अन्तरिम, आजमाइशी कार्रवाइयों के ऐतिहासिक महत्व पर बहुत बल दिया गया था और इससे काफी कुछ सीखा गया था।

इससे काफी पहले, **फ्रेडरिक एंगेल्स** ने पिछली सदी में ही इस सम्बन्ध में लिखा था : **"राज्य और राज्य के उपकरणों के समाज के सेवक से समाज के स्वामी बनने की स्थिति में इस रूपान्तरण के खिलाफ... जो सभी पूर्ववर्ती राज्यों में अपरिहार्यतः घटित हुआ है..., कम्यून ने दो अचूक साधनों का इस्तेमाल किया। पहला यह कि इसने प्रशासकीय, न्यायिक और शैक्षिक–सभी पदों पर नियुक्तियां सार्विक मताधिकार के आधार पर चुनाव के द्वारा की और इस शर्त के साथ कि कभी भी उन्हीं निर्वाचकों द्वारा (चुने गये व्यक्ति को) वापस भी बुलाया जा सकता था। और दूसरा यह कि ऊंचे और निचले दर्जे के सभी पदाधिकारियों को वही वेतन**

मिलता था जो अन्य मजदूरों को।... इस तरह प्रतिनिधि संस्थाओं के प्रतिनिधियों पर लगाये गये बाध्यताकारी अधिदेशों के अतिरिक्त (उपरोक्त दो निर्णयों द्वारा) पदलोलुपता और कैरियरवाद के रास्ते में एक प्रभावी अवरोधक लगाया गया।"

सत्ता हासिल करने के बाद राज्य के उपकरण समाज के सेवक से समाज के स्वामी के रूप में न बदल जायें, इसकी गारण्टी करने की कोशिश में पेरिस कम्यून ने यह स्पष्ट कर दिया कि बुर्जुआ जनवाद किस तरह एक ढकोसला होता है और किस तरह सर्वहारा जनवाद ही वास्तविक जनवाद होता है। पेरिस कम्यून का यह प्रयोग चीन की सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान एक बार फिर जोर देकर रेखांकित किया गया और इसे व्यवहार में आगे भी बढ़ाया गया। वहां भी पूंजीवादी अधिकारों पर चोट करने के लिए तनख्वाहों के अन्तर के प्रति जागरूकता पैदा की गई, सत्ता में बैठे लोगों के विशेषाधिकार कम करने पर जोर दिया गया, जनता की क्रान्तिकारी चौकसी को उन्नत किया गया, और हर स्तर पर निर्णय की प्रक्रिया में उसकी भागीदारी बढ़ाने की कोशिश की गई।

●

मार्क्स और एंगेल्स ने पेरिस कम्यून की दसवीं जयन्ती के अवसर पर भरपूर क्रान्तिकारी जोश के साथ यूरोपीय मजदूर वर्ग से कहा था, **"कम्यून, जो पुरानी दुनिया के शासकों के विचार में पूर्ण रूप से नष्ट हो चुका है, पहले के किसी भी समय के मुकाबले आज और ज्यादा जीवनी-शक्ति से ओतप्रोत है। इसलिए, हम आप लोगों के साथ मिलकर यह नारा बुलन्द कर सकते हैं : कम्यून जिन्दाबाद।"**

आज नई विश्व-परिस्थितियों में, एक अलग सन्दर्भ में, एक अलग जमीन पर, दुनिया भर के मुक्तिकामी सर्वहारा को एक बार फिर यह नारा बुलन्द करने की जरूरत है–**कम्यून जिन्दाबाद!**

विश्व पूंजीवाद के ताजा संकटों का नया चरण पूंजीपतियों-साम्राज्यवादियों के लिए सबसे अधिक गम्भीर है। पूंजीवादी-बुद्धिजीवी-विचारक भी यह मान रहे हैं कि तमाम नुस्खों और दवाओं से रोगी को सिर्फ थोड़ी देर की राहत ही मिल पा रही है। आने वाले दिनों में बड़े पैमाने पर बगावतों के भड़क उठने की आशंकायें भी प्रकट की जा रही हैं। और सच पूछा जाये तो लातिन अमेरिका और एशिया से लेकर रूस और पूर्वी यूरोप तक इसके संकेत अभी के जनान्दोलनों, उभारों, हड़तालों से ही मिलने लगे हैं कि भविष्य क्या होगा। **इतना तय है कि पूंजीवाद की मंजिल इतिहास का अन्त नहीं है। पूंजीवाद अमर नहीं है।**

भूमण्डलीकरण के नये दौर में, पूरी दुनिया में, ज्यादा मुनाफा निचोड़ने के लिए 'उन्नत मशीनों पर कम से कम मजदूर' का फार्मूला लगाकर भारी आबादी को जिस तरह सड़कों पर ढकेला जा रहा है, मजदूरों के अधिकारों में जिस तरह कटौती की जा रही है, गरीब-मध्यम किसानों को जिस तरह खाली जेब वालों की पहुंच से दूर किया

जा रहा है, धनी-गरीब का अन्तर जितना नंगा होता जा रहा है, उसे लोग चुपचाप झेलते ही नहीं रहेंगे। वे उठ खड़े होंगे। यह तय है। **पूंजीवाद के पास जो एकमात्र रास्ता बचा है, उस पर वह चल रहा है। लोग भी उसी रास्ते पर आगे बढ़ेंगे, जो उनका एकमात्र रास्ता है।**

आने वाली दुनिया के तूफानों को सर्वहारा क्रान्ति के नये संस्करणों में तब्दील करने के लिए सर्वहारा वर्ग को पेरिस कम्यून, अक्टूबर क्रान्ति और सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति का झण्डा एक बार फिर उठाना ही होगा। सर्वहारा क्रान्तिकारियों के लिए जरूरी है कि मेहनतकश अवाम की विद्रोही भावना की बारूद की ढेरी तक वे विचारधारा की चेतना की चिंगारी पहुंचायें। पेरिस कम्यून की शिक्षा हमें हर तरह के सुधारवादियों-संशोधनवादियों-अर्थवादियों के खिलाफ लड़कर वर्ग संघर्ष की धार तेज करने के लिए प्रेरित करती है। पेरिस कम्यून की मशाल एक नई क्रान्तिकारी सर्वहारा पार्टी खड़ी करने के लिए हमें राह दिखा रही है।

पेरिस कम्यून की हार के बाद जो थोड़े से कम्यूनार्ड भागकर फ्रांस से बाहर निकल पाये, उनमें से एक **यूजीन पोतिए** भी थे। 1871 की गर्मियों में लन्दन पहुंचकर पनाह लेने वाले पोतिए फरारी में रची हुई कुछ कविताएं भी अपने साथ लाये थे जो कम्यून की उस ज्वाला में धधकती कविताएं थीं, जो पराजय के बावजूद विश्व-सर्वहारा का मार्ग आलोकित कर रही थी। इन्हीं में से एक कविता यूरोप और फिर दुनिया की सभी भाषाओं में अनूदित हुई और इसकी कुछ पंक्तियां पूरी दुनिया के सर्वहारा वर्ग का संघर्षनाद बन गईं।

'इण्टरनेशनल' नाम से प्रसिद्ध यह आह्वान गीत हर देश के मजदूर गाते हैं, एक ही धुन पर! हम भी इसे गाते हैं :

उठ जाग ओ भूखे बन्दी
अब खींचो लाल तलवार
कब तक सहोगे भाई
जालिम का अत्याचार।
तेरे रक्त से रंजित क्रन्दन
अब दस दिशि लाया रंग
ये सौ बरस के बन्धन
मिल साथ करेंगे भंग।
ये अन्तिम जंग है जिसको
जीतेंगे हम एक साथ
गाओ इण्टरनेशनल
भव स्वतंत्रता का गान।

('बिगुल', मार्च 1999 और अप्रैल '99 में दो किस्तों में प्रकाशित)

नई मज़दूर क्रान्ति की राह भी रौशन करती रहेगी

पेरिस कम्यून की मशाल !

"मजदूरों के पेरिस और उसके कम्यून को नये समाज के गौरवपूर्ण अग्रदूत के रूप में हमेशा याद किया जायेगा। इसके शहीदों ने मजदूर वर्ग के महान हृदय में अपना स्थान बना लिया है।"–कार्ल मार्क्स

इतिहास की कुछ घटनाएं ऐसी होती हैं, जिनसे दूरी जितनी बढ़ती जाती है, उतना ही उनका महत्व और अधिक स्पष्ट होता जाता है।

पेरिस कम्यून एक ऐसी ही महान घटना है। उस पहले मजदूर राज्य की स्मृतियां आज हमारे लिए और अधिक महत्वपूर्ण और प्रेरणादायी हो गयी हैं।

18 मार्च 1871 को पेरिस की मेहनतकश जनता एक बहादुराना हथियारबन्द बगावत में उठ खड़ी हुई। मानव जाति के इतिहास में पहली सर्वहारा सत्ता की स्थापना हुई। 26 मार्च को पेरिस कम्यून का चुनाव हुआ और 28 मार्च को इसकी घोषणा हुई।

कम्यून के सदस्य नगर के सभी वार्डों से जनता द्वारा आम मताधिकार के आधार पर चुने गये थे और उन्हें कभी भी वापस बुलाया जा सकता था। इसमें बुनकरों, कारखाना मजदूरों से लेकर दर्जी-नाई-भिश्ती तक थे जो प्रायः अपना पेशागत काम भी करते थे। कम्यून सदस्यों की तनख्वाह मजदूरों के बराबर थी और उन्हें कोई विशेष अधिकार नहीं प्राप्त था।

कम्यून ने स्थायी सेना और पुलिस को भंग करके मजदूरों के हथियारबन्द दस्तों को राष्ट्रीय गार्ड के रूप में संगठित किया। अफसरशाही को भी भंग करके प्रबन्धन का काम मजदूरों के चुने हुए लोगों को सौंप दिया गया। शिक्षा व स्वास्थ्य सेवाएं पूरी तरह निःशुल्क कर दी गयीं। धर्म को सरकारी कामकाज से एकदम अलग कर दिया गया।

इस तरह पेरिस कम्यून ने पहली बार यह दिखा दिया कि समाजवादी समानता और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का मतलब क्या होता है! पेरिस कम्यून ने बताया कि मजदूर वर्ग का लक्ष्य केवल समाजवाद ही हो सकता है और उसे हासिल किया जा सकता है।

हालांकि यह पहला मजदूर राज्य सिर्फ 72 दिनों तक ही कायम रहा, पर विश्व इतिहास के भावी रास्ते पर इसने अपनी अमिट छाप छोड़ी। यूरोपीय बुर्जुआ ताकतों के हाथों कम्यून कुचल दिया गया, पर उसकी कीर्तिपताका आज भी लहरा रही है।

कम्यून के अनुभवों का निचोड़ निकालते हुए **मार्क्स** और **एंगेल्स** ने लिखा कि "**मजदूर वर्ग राज्य की बनी-बनाई मशीनरी पर सिर्फ कब्जा करके ही अपने उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकता।"** उसे पुरानी मशीनरी को नष्ट करके राज्य का अपना ढांचा बनाना होगा। **लेनिन** ने बताया है कि पुरानी राज्य मशीन को ध्वस्त करने के रास्ते पर पेरिस कम्यून ने **"पहला विश्व-ऐतिहासिक कदम रखा... और सोवियत सरकार ने दूसरा।"**

आज के समय में पेरिस कम्यून के आदर्श और मॉडल को याद करना विशेष प्रासंगिक है। समाजवादी क्रान्तियों की फौरी पराजय और खासकर, पूंजीवाद की खुली बहाली के बाद, जब से पूरी दुनिया में निजीकरण-उदारीकरण का शोर मचा हुआ है, तब से मजदूर आन्दोलन के नेतृत्व पर काबिज सामाजिक जनवादी और तरह-तरह के बुर्जुआ सुधारवादी भी यह कहने लगे हैं कि इन घोर मजदूर-विरोधी नीतियों को स्वीकारने के अतिरिक्त मजदूर वर्ग के पास और कोई चारा नहीं है। समाजवाद और क्रान्ति का तो जैसे उन्होंने नाम ही भुला दिया है। उनके अनुसार, मजदूर वर्ग का लक्ष्य ज्यादा से ज्यादा "कल्याणकारी राज्य" के बुर्जुआ मॉडल को पूरी तरह तोड़े जाने से बचाना है, सब्सिडी और रियायतों में कटौती को रोकना है और अपने ही भाइयों की छंटनी और रोजगार में कटौती की शर्तों पर अपनी तनख्वाहें बढ़वाना है।

पर इस सच्चाई का एक दूसरा पहलू भी है। खुले बाजारीकरण की नीतियों ने अब सुधारों-रियायतों की गुंजाइश को समाप्त कर दिया है। सुधार और रियायतों की ट्रेड यूनियन-राजनीति अपनी मौत मर रही है। मेक्सिको से लेकर कोरिया-इण्डोनेशिया तक मजदूर वर्ग के नये जुझारू आन्दोलन उठ खड़े हो रहे हैं। भारत में भी यही होना है। और वह दिन बहुत दूर नहीं है।

ऐसे समय में जरूरी है कि पूंजीवादी व्यवस्था और सुधारवादी-अर्थवादी ट्रेड यूनियन राजनीति से पूरी तरह निराश होते जा रहे मजदूर वर्ग को समाजवाद के विकल्प की याद दिलाई जाये और उसके ऐतिहासिक मिशन के बारे में बताया जाये। मजदूर वर्ग को पेरिस कम्यून के मॉडल की याद दिलानी होगी और बताना होगा कि अब एकमात्र उपाय यही है कि उत्पादन, राजकाज और समाज के ढांचे पर उत्पादन करने वाले वर्गों का नियंत्रण हो।

पूंजीवाद की ऐतिहासिक विफलता अन्तिम तौर पर साबित हो चुकी है। अतः सर्वहारा क्रान्तियों का नया चक्र शुरू होना ही है। अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण होने ही हैं।

सर्वहारा वर्ग की नेतृत्वकारी शक्तियों को एकजुट होकर मजदूर वर्ग में क्रान्तिकारी प्रचार और संगठन का काम करना होगा। केवल तभी हम पेरिस के वीर कम्युनार्डों के सच्चे वारिस बन सकेंगे। ▣

('बिगुल', मार्च-अप्रैल 1998 में प्रकाशित)

पेरिस कम्यून की महान शिक्षाएं

चे चिह-स्त्जू

सत्ता हासिल करने के बाद सर्वहारा वर्ग को हर सम्भव कोशिश करनी चाहिये कि उसके राज्य के उपकरण समाज के सेवक से समाज के स्वामी के रूप में न बदल जायें। सर्वहारा राज्य के विभिन्न अंगों-उपांगों में काम करने वाले सभी कार्यकर्ताओं के लिए ऊंची तनख्वाहें पाने और एकाधिक पदों पर एक साथ काम करते हुए एकाधिक तनख्वाहें पाने की व्यवस्था समाप्त कर दी जानी चाहिये, और इन कार्यकर्ताओं को किसी विशेष सुविधा का लाभ नहीं उठाना चाहिए।

सर्वहारा अधिनायकत्व के राज्य-उपकरणों के अधःपतन को कैसे रोका जाये? इस मामले में पेरिस कम्यून ने कई एक अन्वेषणात्मक कदम उठाये और कई एक ऐसी कार्रवाइयां कीं, जो हालांकि अन्तरिम (या आजमाइशी) थीं, लेकिन जिनका गम्भीर और दूरगामी महत्व था। इन कार्रवाइयों से हमारे सोचने के लिए कुछ महत्वपूर्ण सूत्र उद्घाटित होते हैं।

एंगेल्स के अनुसार, राज्य और राज्य के उपकरणों के, समाज के सेवक से समाज के स्वामी की स्थिति में इस रूपान्तरण के खिलाफ–जो सभी पूर्ववर्ती राज्यों में अपरिहार्यतः घटित हुआ है–कम्यून ने दो अचूक साधनों का इस्तेमाल किया। पहला यह कि, इसने प्रशासकीय, न्यायिक और शैक्षिक–सभी पदों पर सभी सम्बन्धित लोगों के सार्विक मताधिकार के आधार पर चुनाव के द्वारा नियुक्तियां कीं और इस शर्त के साथ कि कभी भी उन्हीं निर्वाचकों द्वारा (चुने गये व्यक्ति को) वापस भी बुलाया जा सकता था। और दूसरा यह कि, ऊंचे और निचले दर्जे के सभी पदाधिकारियों को वही वेतन मिलता था जो अन्य मजदूरों को। कम्यून द्वारा किसी को दी जाने वाली सबसे ऊंची तनख्वाह 6,000 फ्रैंक थी। इस तरह, प्रतिनिधि संस्थाओं के प्रतिनिधियों पर लगाये गये बाध्यताकारी अधिदेशों के अतिरिक्त, (उपरोक्त दो निर्णयों के द्वारा) पदलोलुपता और कैरियरवाद के रास्ते में एक प्रभावी अवरोधक लगाया गया।

पेरिस कम्यून में जनसमुदाय वास्तविक स्वामी था। कम्यून जबतक अस्तित्व में था, जनसमुदाय व्यापक पैमाने पर संगठित था और सभी अहम राजकीय मामलों पर लोग अपने-अपने संगठनों में विचार-विमर्श करते थे। प्रतिदिन क्लब-मीटिंगों में लगभग 20,000 ऐक्टिविस्ट हिस्सा लेते थे जहां वे विभिन्न छोटे-बड़े सामाजिक और राजनीतिक मसलों पर अपने प्रस्ताव या आलोचनात्मक विचार रखते थे। वे क्रान्तिकारी समाचार-पत्रों

और पत्रिकाओं में लेख और पत्र लिखकर भी अपनी आकांक्षाओं और मांगों को अभिव्यक्त करते थे। जनसमुदाय का यह क्रान्तिकारी उत्साह और यह पहलकदमी कम्यून की शक्ति का स्रोत थी।

कम्यून के सदस्य जनसमुदाय के विचारों पर विशेष ध्यान देते थे, इसके लिए लोगों की विभिन्न बैठकों में हिस्सा लेते थे और उनके पत्रों का अध्ययन करते थे। कम्यून की कार्यकारिणी समिति के महासचिव ने कम्यून के सेक्रेटरी को पत्र लिखते हुए कहा थाः, "हमें प्रतिदिन, जुबानी और लिखित–दोनों ही रूपों में बहुत सारे प्रस्ताव प्राप्त होते हैं जिनमें से कुछ, व्यक्तियों द्वारा और कुछ क्लबों और इण्टरनेशनल की शाखाओं द्वारा भेजे गये होते हैं। ये प्रस्ताव प्रायः उत्तम कोटि के होते हैं और कम्यून द्वारा इनपर विचार किया जाना चाहिए।" वास्तव में, कम्यून जनसमुदाय के प्रस्तावों का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन करता था और उन्हें स्वीकार करता था। कम्यून की बहुत-सी महान आज्ञप्तियां जनसमुदाय के प्रस्तावों पर आधारित थीं, जैसे कि राज्य के पदाधिकारियों के लिए ऊंची तनख्वाहों की व्यवस्था समाप्त करना, लगान के बकायों को मंसूख करना, धर्म-निरपेक्ष शिक्षा-व्यवस्था लागू करना, नानबाइयों के लिए रात की पाली में काम करने की व्यवस्था समाप्त करना, वगैरह-वगैरह।

जनसमुदाय कम्यून और इसके सदस्यों के कार्यों की सावधानीपूर्वक जांच-पड़ताल भी करता था। तृतीय प्रान्त के कम्युनल क्लब का एक प्रस्ताव कहता है : "जनता ही स्वामी है... यदि जिन लोगों को तुमने चुना है वे ढुलमुलपन का या अनियंत्रित होने का संकेत देते हैं, तो उन्हें आगे की ओर धक्के दो ताकि हमारा लक्ष्य सिद्ध हो सके–यानी हमारे अधिकारों के लिए जारी संघर्ष अपना लक्ष्य प्राप्त कर सके, गणराज्य का सुदृढ़ीकरण हो सके, ताकि न्यायसंगति का लक्ष्य विजयी हो सके।" प्रतिक्रान्तिकारियों, भगोड़ों और गद्दारों के खिलाफ दृढ़ कदम न उठाने के लिए, स्वयं द्वारा (कम्यून द्वारा) पारित आज्ञप्तियों को तत्काल लागू नहीं करने के लिए और इसके (कम्यून के) सदस्यों के बीच एकता के अभाव के लिए जनसमुदाय ने कम्यून की आलोचना की। उदाहरण के तौर पर, Le Pere Duchene के 27 अप्रैल के अंक में प्रकाशित एक पाठक का पत्र कहता है : "कृपया समय-समय पर कम्यून के सदस्यों को धक्के लगाते रहें, उनसे कहें कि वे सो न जाया करें, और अपनी स्वयं की आज्ञप्तियों को लागू करने में टालमटोल न करें। उन्हें अपने आपसी झगड़ों को समाप्त कर लेना चाहिये क्योंकि सिर्फ विचारों की एकता के जरिए ही वे, अधिक शक्ति के साथ, कम्यून की हिफाजत कर सकते हैं।"

उन जनप्रतिनिधियों को, जिन्होंने जनता के हितों के साथ विश्वासघात किया हो, बदल देने और वापस बुला लेने के प्रावधान खोखले शब्द-मात्र नहीं थे। कम्यून ने, वस्तुतः ब्लांशे को कम्यून की सदस्यता से वंचित कर दिया था क्योंकि वह पादरी, व्यापारी और खुफिया एजेण्ट रहा था। वह पेरिस पर कब्जा के दौरान 'नेशनल गार्ड' की कतारों में छलपूर्वक घुस गया था और जालसाजी करके फर्जी नाम से कम्यून का सदस्य बन गया था। कम्यून ने इस तथ्य के मद्देनजर क्लूसेरे को सैनिक प्रतिनिधि

के ओहदे से वंचित कर दिया कि 'सैनिक प्रतिनिधि की असावधानी और लापरवाही से इस्सी दुर्ग लगभग खो दिया गया था।' इसके पहले, लूइये को भी पदच्युत किया जा चुका था और 'नेशनल गार्ड' की केन्द्रीय कमेटी द्वारा गिरफ्तार किया जा चुका था।

पेरिस कम्यून ने राज्य के पदाधिकारियों के विशेषाधिकारों को समाप्त करने में भी दृढ़ता का परिचय दिया और, तनख्वाहों के मामले में इसने ऐतिहासिक अर्थवत्ता से युक्त एक महत्वपूर्ण सुधार किया।

हम जानते हैं कि शोषक वर्गों के अधीनस्थ राज्य अपने अधिकारियों को निरपवाद रूप से उत्तम कोटि की जीवन-स्थितियां और बहुतेरे विशेषाधिकार प्रदान करते हैं ताकि उन्हें जनता को कुचल डालने वाला अधिपति बना दिया जाये। अपने ऊंचे ओहदों पर बैठे हुए, मोटी तनख्वाहें उठाते हुए और लोगों पर धौंस जमाते हुए–यही है शोषक वर्गों के अधिकारियों की तस्वीर। दूसरे फ्रांसीसी साम्राज्य के काल को लें। उस दौरान अधिकारियों की सालाना तनख्वाहें इस प्रकार थीं : नेशनल असेम्बली के प्रतिनिधि के लिए 30,000 फ्रैंक; मंत्री के लिए 50,000 फ्रैंक; प्रिवी कौंसिल के सदस्य के लिए एक लाख फ्रैंक; स्टेट के कौंसिलर के लिए 1 लाख 30 हजार फ्रैंक। यदि कोई व्यक्ति कई आधिकारिक पदों पर एक साथ काम करता था तो वह इकट्ठे कई तनख्वाहें उठाता था। उदाहरण के लिए, नेपोलियन तृतीय का प्रिय पात्र राउहेर एक ही साथ नेशनल असेम्बली का प्रतिनिधि, प्रिवी कौंसिल का सदस्य और स्टेट का कौंसिलर–तीनों था। उसकी कुल सालाना तनख्वाह 2 लाख 60 हजार फ्रैंक थी। पेरिस के एक कुशल मजदूर को इतनी रकम कमाने के लिए 150 वर्षों तक काम करना पड़ता। जहां तक खुद नेपोलियन तृतीय की बात थी, राज्य के खजाने से उसे सालाना 2 करोड़ 50 लाख फ्रैंक दिये जाते थे। अन्य राजकीय आर्थिक सहायताओं को मिलाकर उसकी कुल सालाना आमदनी तीन करोड़ फ्रैंक थी।

फ्रांसीसी सर्वहारा इस स्थिति से घृणा करता था। पेरिस कम्यून की स्थापना के पहले भी, उसने कई मौकों पर यह मांग की थी कि अधिकारियों की ऊंची तनख्वाहों की व्यवस्था को समाप्त कर दिया जाये। कम्यून की स्थापना के साथ ही, मेहनतकश अवाम की यह चिरकालिक आकांक्षा पूरी हो गई। 1 अप्रैल को यह प्रसिद्ध आज्ञप्ति जारी हुई कि किसी भी पदाधिकारी को दी जाने वाली सबसे ऊंची सालाना तनख्वाह 6,000 फ्रैंक से अधिक नहीं होनी चाहिए। आज्ञप्ति के अनुसार : पहले, "सार्वजनिक संस्थाओं के ऊंचे ओहदे, ऊंची तनख्वाहों के कारण, प्रलोभन की चीज माने जाते थे और संरक्षण के रूप में उन्हें किसी को दिया जाता था।" लेकिन "एक सच्चे जनवादी गणराज्य में दायित्वमुक्त, आराम की नौकरियों या ऊंची तनख्वाहों के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता।" 6000 फ्रैंक की रकम उस समय के एक कुशल फ्रांसीसी मजदूर की सालाना मजदूरी की कुल रकम के बराबर थी। प्रसिद्ध वैज्ञानिक हक्सले के अनुसार, यह रकम लन्दन मेट्रोपोलिटन स्कूल बोर्ड के एक सेक्रेटरी की तनख्वाह के पांचवे हिस्से से भी कुछ कम थी।

पेरिस कम्यून ने अपने पदाधिकारियों द्वारा एक साथ कई तनख्वाहें उठाने पर भी रोक लगा दी, और 19 मई के निर्णय के अनुसार :

"इस बात का ध्यान रखते हुए कि कम्यून की व्यवस्था के अन्तर्गत, हर आधिकारिक पद के लिए निर्धारित पारिश्रमिक की राशि हर उस व्यक्ति के लिए सुचारु रूप से और सम्मानपूर्वक जीवन-यापन लायक होनी चाहिये जो अपने दायित्वों को पूरा करता है... कम्यून यह प्रस्ताव पारित करता है : एक से अधिक पद पर काम करने के एवज में किसी तरह का अतिरिक्त पारिश्रमिक दिया जाना निषिद्ध है, कम्यून के जिन पदाधिकारियों को उनके सामान्य काम के अतिरिक्त कोई दूसरा जिम्मेदारी का काम सौंपा जायेगा, उन्हें कोई नया पारिश्रमिक पाने का अधिकार नहीं होगा।"

ऊंची तनख्वाहों और एक से अधिक पदों के लिए तनख्वाहों को समाप्त करने के साथ ही कम्यून ने कमतर तनख्वाहों को बढ़ाने का भी काम किया ताकि वेतन मान में अन्तर को कम किया जा सके। उदाहरण के तौर पर डाकखाने को लें : कम तनख्वाह वाले कर्मचारियों की पगार 800 फ्रैंक सालाना से बढ़ाकर 1200 फ्रैंक कर दी गयी जबकि 12,000 फ्रैंक सालाना की ऊंची तनख्वाहों को आधा घटाकर 6,000 फ्रैंक कर दिया गया। कम तनख्वाह वाले कर्मचारियों की आजीविका सुनिश्चित करने के लिए कम्यून ने त्वरित प्रावधान के द्वारा सभी आर्थिक कटौतियों और अर्थदण्डों पर भी रोक लगा दी।

विशेषाधिकारों, ऊंची तनख्वाहों और एक साथ कई पदों के लिए कई तनख्वाहों की समाप्ति से सम्बन्धित विनियमों के क्रियान्वयन में कम्यून के सदस्यों ने स्वयं मॉडल का काम किया। कम्यून के एक सदस्य थीस्ज को, जो डाकखाने का प्रभारी था, विनियमों के अनुसार 500 फ्रैंक माहवार की तनख्वाह मिल सकती थी, पर वह सिर्फ 450 फ्रैंक लेने पर ही राजी हुआ। कम्यून के जनरल ब्रोब्लेवस्की ने स्वेच्छा से अधिकारी श्रेणी का अपना वेतन छोड़ दिया और एलिसे महल में दिये गये अपार्टमेण्ट में रहने से इंकार कर दिया। उसने घोषणा की : "एक जनरल की जगह उसके सैनिकों के बीच होती है।"

पेरिस कम्यून की कार्यकारिणी समिति ने जनरल की पदवी को समाप्त करने के लिए भी एक प्रस्ताव पारित किया। 6 अप्रैल के अपने प्रस्ताव में समिति ने कहा : "इस तथ्य के मद्देनजर कि जनरल की पदवी नेशनल गार्ड के जनवादी संगठन के उसूलों के असंगत है... यह निर्णय लिया जाता है : जनरल की पदवी समाप्त की जाती है।" अफसोस की बात है कि यह निर्णय व्यवहार में लागू नहीं हो सका।

राज्य के नेता जो वेतन लेते थे वह एक कुशल मजदूर के वेतन के बराबर होता था। अधिक काम करना उनका अनिवार्य कर्तव्य था, पर उन्हें अधिक वेतन लेने का या किसी भी तरह की विशेष सुविधा का कोई अधिकार नहीं था। यह एक अभूतपूर्व चीज थी। इसने 'सस्ते सरकार' के नारे को सच्चे अर्थों में यथार्थ में रूपान्तरित कर दिया। इसने तथाकथित राजकीय मामलों के संचालन के इर्दगिर्द निर्मित "रहस्य" और "विशिष्टता" के उस वातावरण को समाप्त कर दिया–जो शोषक वर्ग द्वारा जनता को

मूर्ख बनाने के एक साधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। इसने राजकीय मामलों के संचालन को सीधे-सीधे एक मजदूर के कर्तव्यों में बदल दिया और (राज्य के) पदाधिकारियों को 'विशेष औजारों' से काम लेने वाले मजदूरों में रूपान्तरित कर दिया। पर इसकी महान अर्थवत्ता सिर्फ इसी बात में निहित नहीं है। भौतिक पुरस्कारों या लाभों के मामले में, इसने पदाधिकारियों के अधःपतन को रोकने वाली स्थितियों का निर्माण किया। लेनिन के अनुसार, "यह कदम, और साथ ही पदाधिकारियों के चुनाव और सभी सार्वजनिक अधिकारियों के हटा दिये जाने का सिद्धान्त तथा उन्हें "मालिक वर्ग" के मानकों या बुर्जुआ मानकों के बजाय सर्वहारा मानकों के अनुसार वेतन-भुगतान—यह मजदूर वर्ग का आदर्श है।" वह आगे कहते हैं:

"सभी प्रतिनिधित्व भत्तों की, और अधिकारियों के सभी वित्तीय विशेषाधिकारों की समाप्ति, राज्य के सभी सेवकों का पारिश्रमिक 'मजदूरों की तनख्वाह' के स्तर तक घटा देना। यह बुर्जुआ जनवाद के सर्वहारा जनवाद में, उत्पीड़कों के जनवाद के उत्पीड़ित वर्गों के जनवाद में, रूपान्तरण को, राज्य के एक वर्ग विशेष द्वारा दमन के 'विशेष बल' से,— उत्पीड़कों का दमन करने वाले, जनता की बहुसंख्या के—मजदूरों और किसानों के 'सामान्य बल' में रूपान्तरण को, अन्य किसी चीज के मुकाबले अधिक स्पष्टता से प्रदर्शित करता है। और यही वह विशिष्ट ध्यानाकर्षक बिन्दु है, राज्य की समस्या से जुड़ा हुआ शायद वह सर्वाधिक महत्वपूर्ण बिन्दु है, जिस पर मार्क्स के विचारों की पूरी तरह अनदेखी की गई है!... जो किया गया है वह यह कि इसके बारे में चुप्पी साध ली गयी है मानो यह पुराने ढंग के 'भोलेपन' का एक हिस्सा हो।"

और ठीक यही वह चीज है जो ख्रुश्चेवी संशोधनवादियों का नेतृत्वकारी गुट कर रहा है : उन्होंने पेरिस कम्यून के इस महत्वपूर्ण अनुभव की पूरी तरह उपेक्षा की है। वे विशेषाधिकारों के पीछे भागते हैं, अपने विशेषाधिकार प्राप्त ओहदों का इस्तेमाल करते हैं, सार्वजनिक गतिविधियों को निजी लाभ के मौकों में बदल देते हैं, जनता की मेहनत के फल हड़प जाते हैं और साधारण मजदूरों और किसानों की तनख्वाहों से दसियों गुना और कभी-कभी तो सैकड़ों गुना अधिक कमाई करते हैं। राजनीतिक अवस्थिति से लेकर जीवन-प्रणाली तक में, वे मेहनतकश अवाम से मुंह मोड़ चुके हैं और बुर्जुआ वर्ग और नौकरशाह पूंजीपति जो कुछ करते हैं, उसी की नकल करने लगे हैं। अपने शासन का सामाजिक आधार मजबूत करने की कोशिश में, मोटी आमदनी और विशेषाधिकारों वाला एक सामाजिक संस्तर तैयार करने में, वे ऊंची तनख्वाहों, ऊंचे पुरस्कारों, ऊंची फीसों एवं वजीफों का और धन कमाने के अन्य तरह-तरह के तरीकों का भी इस्तेमाल करते हैं। जनता की क्रान्तिकारी संकल्प शक्ति को पैसे से क्षरित करने की कोशिश में, वे "भौतिक प्रोत्साहनों" के बारे में बेतहाशा बातें करते हैं, रूबल को "शक्तिशाली संचालक शक्ति" बताते हैं और कहते हैं कि उन्हें 'लोगों को शिक्षित करने के लिए रूबलों का इस्तेमाल करना' चाहिए। ख्रुश्चेवी संशोधनवादियों की इन हरकतों की तुलना पेरिस कम्यून के "भोलेपन" से (जैसाकि वे कहते हैं) करने पर कोई भी व्यक्ति

आसानी से देख सकता है कि जनता के सेवक और जनता के स्वामी होने का क्या मतलब होता है, राज्य के अवयवों को समाज के सेवक से समाज के स्वामी में रूपान्तरित कर दिये जाने का क्या अर्थ है। एंगेल्स लिखते हैं, "क्या तुम जानना चाहते हो कि यह अधिनायकत्व कैसा होता है? पेरिस कम्यून को देखो। यह सर्वहारा का अधिनायकत्व था।" इसी प्रकार हम कह सकते हैं : क्या तुम जानना चाहते हो कि सर्वहारा का अधःपतित अधिनायकत्व कैसा होता है? तो ख्रुश्चेवी संशोधनवादी गुट के शासन के अन्तर्गत सोवियत संघ के "समूची जनता के राज्य" को देखो।

सर्वहारा वर्ग को दुश्मन की नकली शांति वार्ताओं के प्रति सतर्क रहना चाहिये जबकि वह वास्तव में युद्ध की तैयारी कर रहा होता है, और प्रतिक्रान्तिकारी दोहरे रणकौशल से निपटने के लिए क्रान्तिकारी दोहरे रणकौशल का इस्तेमाल करना चाहिये।

पेरिस कम्यून ने वसीयत के तौर पर हमारे लिए कई महान और प्रेरणादायी शिक्षाएं छोड़ी हैं। इनमें से बहुतेरी सकारात्मक रूप से मूल्यवान हैं; और कुछ अन्य कड़वे अनुभवों की शिक्षाएं हैं।

कम्यून के नेतृत्व में ब्लांकीवादी और प्रूधोंवादी शामिल थे। इनमें से कोई भी सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी पार्टी नहीं थी। इनमें से किसी ने भी मार्क्सवाद को समझा नहीं था और किसी के पास सर्वहारा क्रान्ति को नेतृत्व देने का अनुभव नहीं था। सर्वहारा वर्ग द्वारा आगे ठेल दिये जाने पर उन्होंने कुछ चीजों को सही ढंग से अंजाम दिया, लेकिन अपनी राजनीतिक चेतना की कमी के कारण उन्होंने बहुतेरी गलतियां भी कीं। इनमें से एक प्रधान गलती यह थी कि वे दुश्मन की शांति वार्ताओं की धोखाधड़ी के शिकार हो गये जबकि वह वास्तव में युद्ध की तैयारी कर रहा था। उन्होंने

18 मार्च, 1871 को पेरिस के मजदूरों और नेशनल गार्ड के सिपाहियों ने नेशनल गार्ड के तोपखाने पर कब्जा कर लिया

दुश्मन को दीवार से जकड़ तो दिया लेकिन अपने विजयी आक्रमण का दबाव देश के भीतर बनाये नहीं रख सके और दुश्मन का पूरी तरह से सफाया नहीं कर सके। उन्होंने दुश्मन को उसकी झूठी शांति वार्ताओं की आड़ में दम ले लेने की मोहलत दे दी और इस अन्तराल में उसे प्रत्याक्रमण के लिए अपनी सेनाओं को पुनर्संगठित कर लेने का मौका मिल गया। उनके पास अपनी क्रान्तिकारी विजय को विस्तार देने का अवसर था, पर उन्होंने इसे अपनी उंगलियों के बीच से फिसल जाने दिया....

जब वर्साय अपने छुरे तेज कर रहा था, तो पेरिस मतदान में लगा हुआ था, जब वर्साय युद्ध की तैयारी कर रहा था, तो पेरिस वार्ताएं कर रहा था। नतीजा यह हुआ कि वर्साय के दस्यु-दल अपने कसाइयों के छुरों के साथ पेरिस में घुस गये। उन्होंने अपने कब्जे में आये कम्यून के सदस्यों और सैनिकों को गोली मार दी; उन्होंने चर्च में शरण लिये हुए लोगों को गोली मार दी; उन्होंने अस्पतालों में पड़े घायल सैनिकों को गोली मार दी; उन्होंने बुजुर्ग मजदूरों को यह कहते हुए गोली मार दी कि इन लोगों ने बार-बार बगावतें की हैं और ये खांटी अपराधी हैं; उन्होंने स्त्री-मजदूरों को यह कहते हुए गोली मार दी कि ये "स्त्री अग्नि-बम" हैं और यह कि ये स्त्रियों जैसी सिर्फ तभी लगती हैं जब "मृत होती हैं"; उन्होंने बाल मजदूरों को यह कहकर गोली मार दी कि "वे बड़े होकर बागी बनेंगे।" यह हत्याकाण्ड, जिसे वे "शिकार करना" कहते थे, पूरे जून के महीने भर चलता रहा। पेरिस लाशों से भर गया, सैन खून की नदी बन गई और कम्यून इस लहू के समन्दर में डुबो दिया गया। तीस हजार से अधिक लोग इस जनसंहार में मारे गये और एक लाख से अधिक लोग बन्दी बना लिये गये या निर्वासित कर दिये गये। वर्साय ने पेरिस की 'सदाशयता' और 'दरियादिली' का यह सिला दिया। इसकी झूठी शांति वार्ताओं और युद्ध की वास्तविक तैयारियों की चालबाजी की यह अन्तिम परिणति थी। यह रक्त से लिखी गई एक कड़वी शिक्षा थी। इसने हमें सिखाया कि सर्वहारा वर्ग को क्रान्ति को अन्त तक चलाना होगा; कि भागते हुए डकैतों का पीछा किया जाना चाहिये और उन्हें तबाह कर देना चाहिये, कि डूबते हुए चूहों को पीट-पीटकर मार डालना चाहिये; कि दुश्मन को अपना दम फिर से हासिल कर लेने का मौका कतई नहीं दिया जाना चाहिए।

यदि यह कहा जा सकता है कि 95 वर्षों पहले पेरिस कम्यून के अधिकांश सदस्य थियेर की नकली शांति वार्ताओं और युद्ध की वास्तविक तैयारियों के कुचक्र को सही समय पर भांप नहीं सके, और यह कि पर्याप्त अनुभव और समझदारी की कमी के कारण ऐसा हुआ, तो आज, जब ख्रुश्चेवी संशोधनवादी अमेरिकी साम्राज्यवाद की फर्जी शांति और वास्तविक आक्रमण की नीति की सेवा में सबकुछ कर रहे हैं, वह समझदारी की कमी का मामला निश्चित रूप से नहीं है। ख्रुश्चेवी संशोधनवादी पूरी तरह गद्दारी की अवस्थिति पर जा खड़े हुए हैं और प्रतिक्रान्तिकारी दोहरे रणकौशल द्वारा सर्वहारा के क्रान्तिकारी आन्दोलन और राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन का गला घोंटने की कोशिश में अमेरिकी साम्राज्यवादियों के साथ सहयोग कर रहे हैं। फिर भी, समय आगे बढ़ रहा है, जनता आगे बढ़ रही है और क्रान्ति आगे बढ़ रही है। क्रान्तिकारी जनता ज्यादा

से ज्यादा अच्छे ढंग से यह समझती जा रही है कि प्रतिक्रान्तिकारी दोहरे रणकौशल के विरोध में क्रान्तिकारी दोहरे रणकौशल का किस प्रकार इस्तेमाल किया जाता है और क्रान्ति को अन्त तक कैसे चलाया जाता है। अपने सभी किस्म के प्रतिक्रान्तिकारी दोहरे रणकौशलों के साथ साम्राज्यवादी, संशोधनवादी और सभी प्रतिक्रियावादी जनता द्वारा अन्तिम तौर पर, समूचा का समूचा, इतिहास के कूड़ेदानी के हवाले कर दिये जायेंगे।

पेरिस कम्यून की इक्कीसवीं वर्षगांठ के अवसर पर, एंगेल्स ने लिखा थाः "बुर्जुआ वर्ग को अपनी 14 जुलाई या 22 सितम्बर का उत्सव मनाने दो। सर्वहारा वर्ग का त्यौहार तो सभी जगह हमेशा 18 मार्च ही होगा।"

आज, जब हम सर्वहारा वर्ग का त्यौहार—पेरिस कम्यून के विद्रोह की 95वीं वर्षगांठ मना रहे हैं, दुनिया पर एक नजर डालने पर एक महान क्रान्तिकारी परिस्थिति दिखाई देती है जब "चारों महासागर उफन रहे हैं, बादल और जल क्रोधोन्मत्त हो उमड़ रहे हैं; पांचो महाद्वीप प्रकम्पित हो रहे हैं, हवाएं और बिजलियां गरज रही हैं।" इतिहास ने मार्क्स की उस भविष्यवाणी को पूरी तरह साकार कर दिया है, जो उन्होंने 95 वर्षों पहले की थी :

यदि कम्यून को कुचल भी दिया गया, तब भी संघर्ष सिर्फ स्थगित होगा। कम्यून के सिद्धान्त शाश्वत और अनश्वर हैं, जबतक मजदूर वर्ग अपनी मुक्ति अर्जित नहीं कर लेता, तबतक ये सिद्धान्त बार-बार अपनी घोषणा करते रहेंगे। पेरिस कम्यून का पतन हो सकता है, लेकिन जो सामाजिक क्रान्ति इसने प्रारम्भ की है, वह विजयी होगी। इसकी जमीन सर्वत्र मौजूद है। ▣

('पीकिङ रिव्यू', 15 अप्रैल, 1966 में प्रकाशित) ('दायित्वबोध' से साभार)

लक्ज़मबर्ग के बाग में वीर कम्युनार्ड फायरिंग स्क्वाड का सामना करते हुए

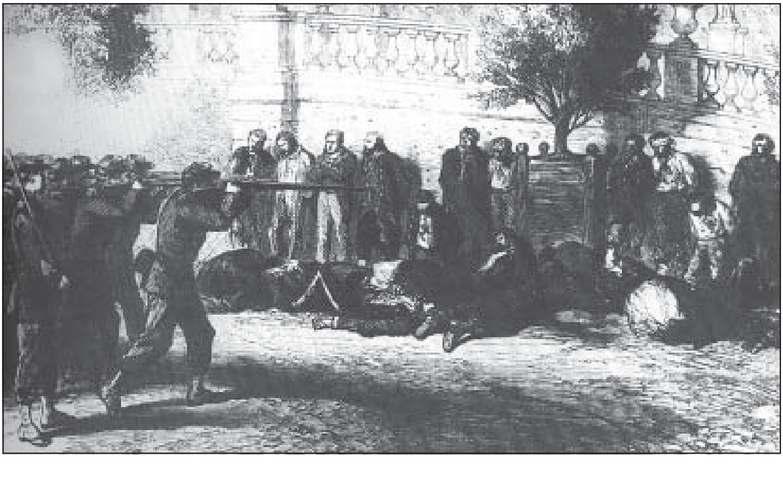

कैसे पहुंची पेरिस कम्यून की चिंगारी चियापास की पहाड़ियों में

सत्यप्रकाश

मुक्ति के स्वप्न, मुक्ति के विचार, अमर होते हैं। उन्हें दबाया जा सकता है, धूल और राख की सात परतों के नीचे दफन किया जा सकता है, स्मृतियों से ओझल किया जा सकता है, निर्वासित किया जा सकता है। पर उन्हें कभी मिटाया नहीं जा सकता। लहरों में बहकर या हवाओं में उड़कर किसी कठोर चट्टान की नन्हीं सी दरार में जा गिरे बीज की तरह वे फिर अंखुवाते हैं, छनकर पहुंची सूरज की जरा सी रोशनी और थोड़ी सी नमी से भी वे पोषण लेकर बढ़ते रहते हैं और फिर एक दिन चट्टान का सीना फाड़कर बाहर आ जाते हैं।

सवा सौ साल पहले 1871 के पेरिस कम्यून की चिंगारी आज मेक्सिको के चियापास की पहाड़ियों में लड़ रहे गुरिल्ला योद्धाओं तक कैसे पहुंची, यह एक बेहद रोमांचक, हैरतअंगेज और साथ ही आशा से भर देने वाली कहानी है।

अमेरिकी इजारेदार पूंजीपतियों द्वारा "खुली (बाजार) डकैती" को और तेज करने के लिए थोपे गये 'उत्तरी अमेरिका मुक्त व्यापार समझौते' (नाफ्टा) के लागू होने वाले दिन ही मेक्सिको में भड़के सशस्त्र किसान उभार ने सारे विश्व को चौंका दिया था। चियापास की पहाड़ियों में लड़ रहे विद्रोहियों में शामिल स्त्री योद्धाएं स्त्रियों में नई जागृति का संकेत दे रही थीं।

यहां हम इतिहास की एक अनोखी घटना की चर्चा करेंगे जो हमें पेरिस के बैरिकेड्स से चियापास के घने जंगलों से ढंकी पहाड़ियों तक ले जाती है–एक लाल झण्डे और एक "लाल दिल" वाली महिला के पदचिह्नों के सहारे।

पेरिस कम्यून की स्त्रियां

18 मार्च, 1871। शहर के मजदूरों और आम जनता के सशस्त्र दस्ते पेरिस नेशनल गार्ड का पेरिस पर अधिकार हो गया। थियेर के नेतृत्व में राष्ट्रीय सरकार भागकर वर्साई के महलों में जा छुपी। दस दिन बाद पेरिस कम्यून की स्थापना की

स्त्रियों की यूनियन ने क्रान्तिकारी पेरिस में सक्रिय हिस्सेदारी की। उन्होंने नर्सों की इकाइयां बनायीं, अस्पताल चलाने में मदद की, सूचना और संचार बनाये रखने का काम किया, क्रान्तिकारी प्रचार कार्य चलाया और बैरीकेडों पर दुश्मन से मोर्चा भी लिया।
चित्र में : स्त्री कम्युनार्डों की एक बैठक

घोषणा कर दी गयी। इतिहास में पहली बार सर्वहारा अधिनायकत्व कायम हुआ। यह एक अभूतपूर्व घटना थी।

यूरोप की पूर्ववर्ती क्रान्तियों में, खासकर 1848 की क्रान्ति में सर्वहारा ने भाग लिया था और प्रायः मुख्य लड़ाकू शक्ति वही था लेकिन पहली बार उसने खुद अपने लिए सत्ता पर कब्जा किया था। कम्यून सिर्फ दो महीने टिका रहा, लेकिन बुर्जुआ समाज के ताने-बाने को तोड़कर एक नये प्रकार की क्रान्ति जन्म ले चुकी थी।

इस नयी क्रान्ति के सभी क्षेत्रों में स्त्रियां अग्रिम मोर्चों पर थीं। उन्होंने कम्यून के नेतृत्व में मौजूद प्रूधों जैसे रूढ़िवादियों को चुनौती दी जो स्त्रियों को दबाकर रखने की वकालत करते थे। उन्होंने चर्च की खुली मुखालफत की। और राजनीति में तथा रणभूमि में उनके दुस्साहसिक कारनामों से पेरिस के बुर्जुआ जेंटिलमैनों और उनके जनरलों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई।

कम्यून के लाल झण्डे की तरह लाल कमरबन्द और लाल स्कार्फ पहने कम्यून की स्त्रियां बुर्जुआ हलकों में कुख्यात थीं। दुश्मन सैनिकों की बढ़त रोकने के लिए केरोसिन से लैस उनके दस्ते जगह-जगह आग लगा देते थे। जब वर्साय की सेनाओं

ने पेरिस पर फिर कब्जा कर लिया तो बड़ी तादाद में स्त्रियों को फायरिंग स्क्वाड के सामने भेजा गया। शहरी गरीब वर्ग की कोई भी स्त्री टोकरी या बोतल लिए हुए दिख गयी तो उसे 'फूंक-ताप दस्ते' की सदस्य मानकर फौरन गोली मार दी जाती थी।

हमले की पहली रात। अंधेरे का फायदा उठाकर फ्रांसीसी सरकार के सैनिक चुपचाप पेरिस में घुस आये थे। वे उन तोपों को वापस ले जाने की फिराक में थे जिन्हें जनता ने छीन लिया था। लेकिन उन्हें देख लिया गया और थोड़ी ही देर में वहां स्त्री-पुरुषों की भीड़ उमड़ पड़ी। स्त्रियों ने तोपों को अपने शरीर से ढंक दिया। सिपाहियों ने अफसरों का गोली चलाने का आदेश मानने से इंकार कर दिया। सैनिक वापस लौट गये, पर अनेक कम्युनार्डों से आ मिले।

लुइस मिशेल

येलेना दमित्रियेवा-तोमानोवस्काया, एक रूसी क्रान्तिकारी जो कम्यून के दौरान स्त्री यूनियन की नेताओं में से एक थीं।

पेरिस कम्यून की इन वीरांगनाओं में एक थीं लुइस मिशेल। 1830 में जन्मी लुइस की मां एक किसान स्त्री थी और पिता एक बिगड़ा हुआ जागीरदार जिसने उसे अपनी पुत्री मानने से इंकार कर दिया था। कम्यून के समय वह 41 वर्ष की थी।

पढ़-लिखकर शिक्षिका बनी लुइस 1851 में मां के साथ पेरिस आ गई जहां उन्होंने 'सोसायटी फार दि रिक्लेमेशन ऑफ विमेन्स राइट्स' और 'स्त्री अधिकार' नामक अखबार की शुरुआत में अहम भूमिका निभाई। प्रशा की सेना द्वारा पेरिस की घेरेबन्दी के दौरान उन्होंने मोंतमार्त्रे में "सतर्कता समिति" गठित की और 'बीस अरांदिस्मेंट्स की केन्द्रीय कमेटी' में डेलीगेट चुनी गईं जिसने ट्रेड यूनियन फेडरेशन तथा कार्लमार्क्स के इंटरनेशनल की पेरिस शाखा के साथ मिलकर "...बुर्जुआ वर्ग के विशेषाधिकारों के खात्मे, एक शासक जाति के रूप में इसकी समाप्ति और राजनीतिक सत्ता मजदूरों को सौंपे जाने" की मांग उठाई थी।

कम्यून के दौरान मिशेल चारों तरफ दिखाई देती थीं। कभी वह स्त्रियों को नर्सों और योद्धाओं के रूप में संगठित करती नजर आतीं, कभी राजनीतिक बैठकों में भाषण करतीं तो कभी सैनिक लड़ाइयों की अग्रिम पंक्ति में मोर्चा लेती दिखतीं।

कम्यून की घोषणा के बाद लुइस मिशेल वर्साई जाकर प्रतिक्रियावादी सरकार के नेता थियेर को खत्म कर देना चाहती थीं। इसे नामंजूर करने के पीछे एक तर्क यह दिया गया कि ऐसा कर पाना व्यावहारिक नहीं था। लुइस भेष बदलकर दुश्मन सेनाओं के बीच से होती हुई वर्साई पहुंच गईं, सैनिकों के बीच राजनीतिक प्रचार किया, अपना वर्साई पहुंचना साबित करने के लिए वहां के कुछ अखबार खरीदे और सुरक्षित लौट आईं। एक बार जब घेरेबन्दी से भयभीत हो गया कम्यून का एक पदाधिकारी क्लैमार्त स्टेशन को दुश्मन के सुपुर्द कर देना चाहता था, तो लुइस मिशेल जलती मोमबत्ती लेकर गोला-बारूद से भरे कमरे के दरवाजे पर बैठ गईं और धमकी दी कि यदि उसने समर्पण किया तो वह पूरे स्टेशन को उड़ा देंगी।

कम्यून के अन्तिम सप्ताह में वह मोंतमार्त्रे की कब्रगाह के बैरिकेड पर तबतक लड़ती रहीं जब तक 50 में से सिर्फ 15 योद्धा बचे रह गये। मोंतमार्त्रे को बचाने की असफल कोशिश के बाद मिशेल बचे हुए साथियों को लेकर दूसरे बैरिकेड पर आ गईं और वहां भी दुश्मन सैनिकों का कब्जा हो जाने पर वह भेस बदलकर अपनी बूढ़ी मां को देखने घर पहुंचीं पर वर्साई पुलिस ने लुइस के बदले उनकी मां को गिरफ्तार कर लिया था। लुइस ने अपनी मां की रिहाई के बदले खुद को गिरफ्तार करा दिया।

उन पर मुकदमा चलाकर दूसरे कम्युनार्डों के साथ उन्हें आस्ट्रेलिया के पास फ्रांसीसी उपनिवेश न्यू कैलिडोनिया के टापू पर निर्वासित कर दिया गया। 1878 में जब वहां पोलिनेशियाई लोगों की बगावत फूट पड़ी तो कुछ कम्युनार्डों ने उसे दबाने में फ्रांसीसी सेना का साथ दिया। लेकिन सच्ची अन्तरराष्ट्रीयतावादी लुइस मिशेल ने पोलिनेशियाई मूल निवासियों का पक्ष लिया और गुप्त रूप से उनकी मदद करती रहीं।

अपने संस्मरणों में मिशेल ने लिखा है : "कनक लोगों (पोलिनेशियाई मूल निवासी) के दिलों में मुक्ति और रोटी की वही आशा थी। मुक्ति और सम्मान की चाह में उन्होंने 1878 में विद्रोह कर दिया। मेरे दूसरे कामरेड उस शिद्दत से इसका समर्थन नहीं करते थे जिस तरह मैं करती थी।... कनक लोग उसी स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे थे जो हम कम्यून के जरिये लाना चाहते थे। एक रात मुझे अपने लाल स्कार्फ को दो टुकड़ों में बांटना पड़ा जिसे मैं हर तलाशी से छुपाकर बचाती आई थी। गोरों के विरुद्ध लड़ने के लिए विद्रोहियों से मिलने जा रहे दो कनक मुझसे विदा लेने आये थे।

वे तूफानी समुद्र में उतर गये। हो सकता है वे खाड़ी पार ही नहीं कर पाये हों, या शायद लड़ते हुए मारे गये हों। मैंने उन्हें फिर नहीं देखा।"

लेकिन कम्यून का लाल स्कार्फ और उसके साथ मुक्ति और समानता के कम्यून के विचार जीवित रहे और हजारों मील का सफर करके दुनिया के दूसरे छोर पर पहुंच गये।

पकड़े गये कनक विद्रोहियों को गुलामों के रूप में बेच दिया गया जिनमें से कुछ खेतों पर काम करने के लिए मेक्सिको ले जाये गये। मेक्सिको के लेखक अन्तोनिया गार्सिया डि लियोन की पुस्तक 'रेजिस्टेंसिया यूटोपिया' इस अद्‌भुत कहानी के आगे के सूत्र ढूंढ़ती है :

"मेक्सिको में 1888 में बस गई हेलेन सार्जेंट नामक अमेरिकी महिला ने अपनी डायरी में लिखा :... अपने "आदिम कृषि कम्युनिज्म" और चियापास के (रेड) इण्डियंस से मिलते-जुलते ऐतिहासिक अनुभवों के साथ कनक लोग पेरिस कम्यून की धुंधली स्मृतियां भी लाये थे। यह एक ऐसी विचित्र घटना थी जिसे विश्व पूंजीवाद के बर्बर विस्तार के सन्दर्भों में ही समझा जा सकता है। पेरिस कम्यून के ये स्मृति-चिह्न सोनोकुस्को (दक्षिण चियापास का क्षेत्र) में अराजकतावादी आन्दोलन और सामाजिक संघर्ष का यूटोपियाई प्रतीक बन गये। कनक विद्रोह के समय न्यू कैलिडोनिया फ्रांसीसियों के कब्जे में था जहां सजायाफ्ता लोगों को निर्वासित कर दिया जाता था। बन्दी कम्युनार्डों की पहली टोली सितम्बर 1872 में वहां पहुंची थी। छह वर्ष बाद जब वहां के मूल निवासियों ने विद्रोह कर दिया तो कुछ निर्वासितों ने मूल निवासियों के आक्रोश का दमन करने में मदद की। लेकिन बहुतों ने, जिनमें अविस्मरणीय लुइस मिशेल भी थीं, विद्रोहियों का पक्ष लिया। कनक लोगों के "कम्यून" की हार के पहले मिशेल ने उन्हें "पेरिस कम्यून का लाल झण्डा" थमाया था। कुचल दिये जाने के बाद जब उन्हें गुलामों के रूप में बेचा गया तो वे उस झण्डे को पहने हुए थे। जब उन्हें प्रशान्त महासागर पारकर दक्षिण अमेरिका के तट पर उतार गया तो वे उस झण्डे को और इसके साथ जुड़ी कम्यून की स्मृतियों और मुक्ति के स्वप्नों को भी ले आये। सोनोकुस्को में यह बीज फिर अंखुवाया और लाल कमरबन्द चामुला मूल निवासियों की लड़ाई का अंग बन गया।" ▣

('दायित्वबोध', जुलाई-अक्टूबर '97 से साभार)

परिशिष्ट

'कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र' और हमारा समय

आलोक रंजन

यह भी एक ऐतिहासिक संयोग ही है कि जिस अमर रचना ने पिछली शताब्दी के मध्य में पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध युद्ध की शुरुआत के समय एक प्रचण्ड रणघोष की भूमिका निभाई थी, उसकी डेढ़ सौवीं जयन्ती हम एक ऐसे महत्वपूर्ण समय में मना रहे हैं, **जब इतिहास फिर एक नाजुक मोड़-बिन्दु पर खड़ा है।**

1976 में **माओ त्से-तुङ** की मृत्यु के बाद चीन में पूंजीवादी पुनर्स्थापना के साथ ही समाजवाद का अन्तिम दुर्ग भी ढह गया। पूर्वी यूरोप की संशोधनवादी सत्ताओं के पतन और सोवियत संघ के टूटने का एक सकारात्मक पहलू यह रहा कि समाजवाद का चोला ओढ़े जो राजकीय पूंजीवाद दुनिया के मेहनतक़शों को भरमा-बरगला रहा था, वह रास्ते से हट गया। वह धोखे की टट्टी हट गई, जिसकी ओट का इस्तेमाल पूंजीवादी शिकार के लिए होता था, साथ ही समाजवाद को बदनाम भी किया जाता था और जनता के क्रान्तिकारी आन्दोलनों को भटकाया-भरमाया भी जाता था। **अब पूरी दुनिया में एक बार फिर पूंजी और श्रम एकदम आमने-सामने खड़े हैं।**

आज समाजवाद की फौरी पराजय पर विश्व पूंजीवाद जब विजय की हुंकार भरने का दिखावा कर रहा है तो उसके मुंह से मात्र मृत्युभय की घुटी-घुटी चीखें ही निकल पा रही हैं। इतिहास की सबसे लम्बी मन्दी और दुश्चक्रीय निराशा इसका ढांचागत संकट बन चुकी है। खुद पूंजीवाद के सिद्धान्तकारों को भी इसके रोग अन्तकारी प्रतीत हो रहे हैं। पश्चिम के धनी देशों में भी बेरोजगारी बढ़ रही है और जनान्दोलन हो रहे हैं। रूस और पूर्वी यूरोप के जिन देशों को "पश्चिमी स्वर्ग" का स्वप्न दिखाया गया, वह नारकीय जीवन की कटु सच्चाई के रूप में सामने आया है। इन देशों का मजदूर वर्ग बेरोजगारी-महंगाई से बेहाल गत पांच वर्षों से लगातार आन्दोलन कर रहा है। यहां अक्टूबर क्रान्ति के नये संस्करण के बीज पड़ चुके हैं।

उधर तीसरी दुनिया के जिन पिछड़े देशों के पूंजीपतियों की बांह मरोड़कर और लालच देकर इनके बाजार को साम्राज्यवादियों ने अपनी पूंजी का अम्बार झोंकने के लिए पूरी तरह खोला है, वहां भी अन्तरविरोध तीखे हो उठे हैं। उदारीकरण-निजीकरण की नीतियों के विरुद्ध मजदूर और किसान आन्दोलन से बगावत की राह पर आगे बढ़ रहे हैं और नये दौर की नई क्रान्तियों की न सिर्फ जमीन तैयार हो रही है, बल्कि रूपरेखा भी।

पूरी दुनिया के स्तर पर पूंजीपति वर्ग और मेहनतक़श वर्ग भूमण्डलीकरण और आर्थिक नवउपनिवेशवाद के नये साम्राज्यवादी चरण में, एक बार फिर आमने-सामने खड़े हैं। **युद्ध-रेखा पहले हमेशा से अधिक स्पष्ट है। साम्राज्यवाद की कमजोर कड़ियां दबाव से कड़क-तिड़क रही हैं। दक्षिण और पूरब के देशों में विस्फोट की सम्भावनाएं सुनिश्चित हो रही हैं। इतिहास संकेत दे रहा है कि पूंजीपति वर्ग और सर्वहारा वर्ग के बीच के विश्व ऐतिहासिक महासमर का दूसरा चक्र शुरू हो चुका है।**

ऐसे समय में **'कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र'** के प्रकाशन की डेढ़ सौंवी वर्षगांठ दुनिया भर के मेहनतकशों के लिए नई प्रेरणा और उत्साह का संकेत लेकर आयी है।

"यूरोप को एक हौवा आतंकित कर रहा है–कम्युनिज्म का हौवा। इस हौवा को भगाने के लिए पोप और जार, मेटर्निख और गीजो, फ्रांसीसी उग्रवादी और जर्मन खुफिया पुलिस–बूढ़े यूरोप की सभी शक्तियों ने पवित्र गठबन्धन बना लिया है।"

('कम्युनिस्ट घोषणापत्र' की शुरुआती पंक्तियां)

आज समाजवाद की मृत्यु के तमाम दावों के बावजूद बूढ़े साम्राज्यवादियों और उनके पिछलग्गू एशिया-अफ्रीका-लातिन अमेरिका के शासक पूंजीपतियों को भी वही हौवा लगातार आतंकित किये हुए है जिस भूत की चर्चा 'घोषणापत्र' की उपरोक्त शुरुआती लाइनों में की गई है। और उनका यह आतंक वास्तविक है।

पूंजीवाद के विरुद्ध विश्व सर्वहारा के ऐतिहासिक वर्ग-महासमर के इस दूसरे चक्र में भी 'घोषणापत्र' का उतना ही महत्व है और यह महत्व तबतक बना रहेगा जबतक सर्वहारा वर्ग पूंजी की सभी किलेबन्दियों को ध्वस्त करके विश्व स्तर पर फैसलाकुन जीत नहीं हासिल कर लेता। विश्व सर्वहारा क्रान्ति के इतिहास में 'घोषणापत्र' का ऐतिहासिक महत्व है, क्योंकि इसमें निरूपित वर्ग संघर्ष और वैज्ञानिक कम्युनिज्म के सिद्धान्त और कार्यक्रम सर्वहारा क्रान्ति के पूरे दौर में प्रासंगिक बने रहेंगे।

'घोषणापत्र' के 1882 के दूसरे रूसी संस्करण की भूमिका में **फ्रेडरिक एंगेल्स** ने लिखा था : *"'घोषणापत्र' ने आधुनिक पूंजीवादी स्वामित्व के आसन्न विघटन की उद्‌घोषणा को अपना लक्ष्य बनाया था।"* और यही इसकी आज भी मौजूद प्रासंगिकता का मूल कारण है। 1872 के जर्मन संस्करण की भूमिका में लिखी गयी एंगेल्स की

यह पंक्तियां आज के लिए भी लागू होती हैं :

"पिछले पचीस वर्षों में परिस्थिति चाहे कितनी भी बदल गई हो, इस 'घोषणापत्र' में निरूपित आम सिद्धान्त समग्र रूप में आज भी उतने ही सही हैं, जितने कि पहले थे।

'घोषणापत्र' : जन्म का इतिहास

सर्वहारा वर्ग की क्रान्तिकारी विचारधारा के मुख्य सर्जक **मार्क्स** और उनके अनन्य सहयोगी **एंगेल्स** के दृष्टिकोण महान ऐतिहासिक घटनाओं के माहौल में विकसित हुए। 19वीं सदी के प्रारम्भ में इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रान्ति ला चुकी भाप मशीनें यूरोप के अन्य देशों में भी पूंजीवाद को विकसित कर रही थीं और सामन्तवाद अब अन्तिम सांसें गिन रहा था। बड़े पैमाने पर पूंजीवादी उद्योग के विकास से किसान और दस्तकार उजड़ रहे थे और उत्पादन के साधनों से वंचित उजरती मजदूर बन रहे थे।

यूरोपीय देशों में पूंजीवाद के पैर जमने के साथ ही वर्ग-संघर्ष तेज हो रहा था, पूंजीवादी जनवादी और राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन फैल रहे थे तथा पूंजीवाद का फिलहाल स्वतःस्फूर्त, अचेतन विरोध करने वाला सर्वहारा वर्ग इतिहास के रंगमंच पर उतर रहा था। 1831 और 1834 में फ्रांस के एक प्रमुख औद्योगिक केन्द्र **लियों** में मजदूरों के विद्रोह भड़क उठे। इसी दशक के उत्तरार्द्ध में इंगलैण्ड में मजदूर वर्ग का पहला जनव्यापी राजनीतिक क्रान्तिकारी आन्दोलन–**चार्टिस्ट आन्दोलन**–चला। जर्मनी और यूरोप के पिछड़े हिस्सों में टूटते सामन्तवाद के खिलाफ उभरता पूंजीपति वर्ग और मध्यवर्ग क्रान्तिकारी संघर्ष कर रहे थे जिनमें शिरकत करने के साथ ही मजदूर वर्ग पूंजीवादी शोषण के विरुद्ध भी आवाज उठाने लगा था। यही क्रान्तिकारी काल, जनसमूहों के प्रचण्ड ऐतिहासिक कार्यकलाप का यही दौर मार्क्सवाद के विकास की जमीन बना।

सबसे पहले 1844 में **मार्क्स** ने पूंजीवादी समाज के आर्थिक सम्बन्धों और सामाजिक-वैचारिक ढांचे की चीर-फाड़ शुरू करते हुए अपना यह विचार प्रस्तुत किया कि **ऐतिहासिक रूप से सर्वहारा वर्ग ही समाजवादी समाज का निर्माण कर सकता है।** उधर **एंगेल्स** भी स्वतंत्र रूप से इन्हीं नतीजों पर पहुंच रहे थे जब दोनों की 1844 में मुलाकात हुई और मानव इतिहास की एक महानतम मैत्री और अपूर्व वैचारिक-रचनात्मक साझेदारी की शुरुआत हुई।

उस समय मजदूर आन्दोलन में तमाम ऐसे हवाई और काल्पनिक समाजवाद की धारणाएं प्रचलित थीं जो ऐतिहासिक प्रगति के भौतिक आधार को नहीं समझती थीं, पूंजीवादी समाज में प्रत्येक वर्ग की भूमिका को पहचानने में असमर्थ थीं और वर्ग-संघर्ष की ऐतिहासिक वास्तविकता को समझने के बजाय "समता", "न्याय" आदि की काल्पनिक सोच रखती थीं। सितम्बर, 1844 में एंगेल्स पेरिस आये और दोनों मित्रों ने साथ

मिलकर द्वंद्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवादी विश्व-दृष्टिकोण को आगे विकसित करते हुए पूंजीवादी समाज के आर्थिक-सामाजिक सम्बन्धों को समझने के काम को आगे बढ़ाया तथा वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त को विकसित करते हुए समाजवाद रंग-बिरंगे बकवासी, दिखावटी और काल्पनिक स्वरूपों पर जबर्दस्त चोट करते हुए उनकी बखिया उधेड़ डाली। यह करते हुए मार्क्स और एंगेल्स ने पेरिस के क्रान्तिकारी ग्रुपों की राजनीतिक-आन्दोलनात्मक कार्रवाइयों में सक्रिय भागीदारी की। 1844 से 1848 के बीच की रचनाओं से स्पष्ट हो जाता है कि इस दौरान मार्क्स ने एंगेल्स के साथ मिलकर *"मध्यमवर्गीय समाजवाद के भांति-भांति के सिद्धान्तों से डटकर संघर्ष करते हुए क्रान्तिकारी सर्वहारावर्गीय समाजवाद, अथवा कम्युनिज्म (मार्क्सवाद) के सिद्धान्तों और कार्यनीति की रूपरेखा तैयार की"* (लेनिन : 'कार्ल मार्क्स')।

"प्रशा की सरकार के निरन्तर अनुरोध के कारण 1845 में मार्क्स को एक खतरनाक क्रान्तिकारी करार देकर पेरिस से निकाल दिया गया। वे ब्रुसेल्स चले गये। 1847 की बसन्त ऋतु में मार्क्स और एंगेल्स ***'कम्युनिस्ट लीग'*** *नामक एक गुप्त प्रचार सोसाइटी के सदस्य बन गये। लीग की दूसरी कांग्रेस (लन्दनः नवम्बर, 1847) में उन्होंने प्रमुखता से भाग लिया और उसी के अनुरोध पर उन्होंने अपना प्रसिद्ध* ***'कम्युनिस्ट घोषणापत्र'*** *तैयार किया। फरवरी, 1848 में वह प्रकाशित हुआ। इस रचना में अद्भुत प्रतिभाशाली स्पष्टता और ओजस्विता से एक नये विश्वदर्शन की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। उसमें सुसंगत भौतिकवाद की, जिसके दायरे में सामाजिक जीवन का क्षेत्र भी आ जाता है, व्याख्या की गई है। विकास के सर्वव्यापी तथा प्रगाढ़ सिद्धान्त, यानी द्वंद्ववाद का परिचय दिया गया है, वर्ग संघर्ष के सिद्धान्त तथा नये, कम्युनिस्ट समाज के स्रष्टा– सर्वहारा वर्ग की विश्व-ऐतिहासिक क्रान्तिकारी भूमिका का निरूपण किया गया है।"* (लेनिन : 'कार्ल मार्क्स')

'घोषणापत्र' का इतिहास एक तरह से उन्नीसवीं सदी के सर्वहारा संघर्षों का ही इतिहास बन गया। इसका उल्लेख स्वयं एंगेल्स के ही शब्दों में बेहतर होगाः ***"घोषणापत्र'*** *का अपना एक अलग इतिहास रहा है। प्रकाशन के साथ ही उसका वैज्ञानिक समाजवाद के हरावलों द्वारा, जिनकी संख्या अभी बिल्कुल ही अधिक न थी, उत्साहपूर्ण स्वागत हुआ (जैसा कि पहली भूमिका में उल्लिखित अनुवादों द्वारा स्पष्ट है), किन्तु थोड़े ही समय बाद, जून 1848 में पेरिस के मजदूरों की पराजय (इस विद्रोह को एंगेल्स ने 1888 के अंग्रेजी संस्करण की भूमिका में "सर्वहारा वर्ग और पूंजीपति वर्ग के मध्य पहली बड़ी लड़ाई" कहा था) से शुरू होने वाली प्रतिक्रिया के साथ उसे पृष्ठभूमि में ढकेल दिया गया, और अन्त में जब नवम्बर 1852 में कोलोन में कम्युनिस्टों को सजा दी गई तो वह "कानूनी तौर पर" बहिष्कृत कर दिया गया। फरवरी क्रान्ति के साथ जिस मजदूर आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था, उसके सार्वजनिक रंगमंच से ओझल हो जाने के बाद 'घोषणापत्र' भी पृष्ठभूमि में चला गया"* ***(1890 के जर्मन संस्करण की***

भूमिका)।

आगे एंगेल्स ने बताया है कि यूरोपीय मजदूर वर्ग ने शासक वर्ग पर एक और प्रहार करने के लिए जब पर्याप्त शक्ति जुटा ली तो 1864 में **अन्तरराष्ट्रीय मजदूर संघ** (प्रथम इण्टरनेशनल) का गठन हुआ। इण्टरनेशनल ने अपना कार्यक्रम घोषणापत्र में निरूपित सिद्धान्तों को नहीं बनाया था, पर इस दौरान के संघर्षों और हारों-जीतों ने यूरोपीय मजदूर वर्ग को अपनी मुक्ति की वास्तविक शर्तों को समझने में काफी मदद की। 1874 में जब इण्टरनेशनल भंग हुआ तो मजदूर वर्ग 1864 से सर्वथा भिन्न स्थिति में था और 1887 आते-आते यूरोपीय मजदूर आन्दोलन का बड़ा और मुख्य हिस्सा 'घोषणापत्र' में निरूपित सिद्धान्तों को अपना मार्गदर्शक सिद्धान्त बना चुका था। 1889 में दूसरे इण्टरनेशनल का गठन हुआ। इस समय तक घोषणापत्र का प्रकाशन न सिर्फ यूरोप की सभी भाषाओं में और अमेरिका में हो चुका था बल्कि यह लातिन अमेरिकी देशों के मजदूर आन्दोलन तक भी पहुंच चुका था। जैसा कि एंगेल्स ने 1890 में लिखा था : *"घोषणापत्र' का इतिहास 1848 के बाद से आधुनिक मजदूर आन्दोलन के इतिहास को एक हद तक प्रतिबिम्बित करता है। आज तो निस्सन्देह 'घोषणापत्र' समस्त समाजवादी साहित्य की सबसे अधिक प्रचलित, सबसे अधिक अन्तरराष्ट्रीय कृति है और वह साइबेरिया से लेकर कैलिफोर्निया तक सभी देशों के करोड़ों मजदूरों का समान कार्यक्रम है।"*

वर्तमान सदी के दूसरे दशक तक 'घोषणापत्र' चीन, भारत सहित एशिया के अधिकांश देशों तक भी पहुंच चुका था। पांचवें दशक तक भारत की अधिकांश प्रमुख भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका था और **यह भारतीय मजदूर वर्ग की भी बुनियादी पाठ्य पुस्तक और मार्गदर्शक किताब बन चुका था।**

'घोषणापत्र' में निरूपित बुनियादी सिद्धान्त और प्रमुख शिक्षाएं

मार्क्स और एंगेल्स की यह अमर रचना उदात्त प्रेरणा और प्रबल क्रान्तिकारी जोश से ओतप्रोत है, जो मेहनतकशों के दिमाग के साथ ही दिल से भी अपील करती हुई संघर्ष का संकल्प जगाती है, क्रान्तिकारी पराक्रम का आह्वान करती है। यह अनुपम कृति वैज्ञानिक कम्युनिज्म का पहला कार्यक्रम मूलक दस्तावेज है जिसमें विचारों की असाधारण गहनता, तर्क की अकाट्य शक्ति तथा सुघड़-सजीव शैली एवं साहित्यिक सौष्ठव का बेजोड़ संगम है। इसमें मार्क्स और एंगेल्स के उस समय तक के समस्त सैद्धान्तिक कार्यों का निचोड़ है जो समाजवाद को कल्पना से विज्ञान की जमीन पर ला उतारता है और सर्वहारा वर्ग का समग्र क्रान्तिकारी विश्व दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। इसमें मार्क्स और एंगेल्स ने पहली बार अपनी शिक्षा, उसके तीनों संघटकों–दर्शन,

राजनीतिक अर्थशास्त्र और वैज्ञानिक समाजवाद के मूलभूत सिद्धान्तों का संक्षिप्त, सुव्यवस्थित और समग्रतापूर्ण विवरण दिया।

मार्क्स के निधन के बाद एंगेल्स ने 'घोषणापत्र' की रचना में उनकी भूमिका का उल्लेख करते हुए इस कृति के निचोड़ की भी चर्चा इन शब्दों में कर डाली है : **"चूंकि 'घोषणापत्र' हमारी संयुक्त रचना है, इसलिए मैं यह कहने के लिए अपने को वचनबद्ध समझता हूं कि इसमें आधारभूत प्रस्थापना, जो इसका नाभिक है, मार्क्स की ही है। वह प्रस्थापना यह है कि प्रत्येक ऐतिहासिक युग का आर्थिक उत्पादन तथा विनिमय का प्रचलित ढंग तथा उससे अनिवार्यतः उत्पन्न होने वाली सामाजिक संरचना उस आधार का निर्माण करती है जिस पर उस युग के राजनीतिक तथा बौद्धिक इतिहास का निर्माण होता है और जिसके बल पर ही उस पर प्रकाश डाला जा सकता है; कि इसके परिणामस्वरूप मानव जाति का पूरा इतिहास (आदिम कबायली समाज के, जिसमें भूमि पर सबका स्वामित्व होता था, विघटन से लेकर) वर्ग संघर्षों, शोषकों और शोषितों, शासकों तथा शासितों के बीच संघर्षों का इतिहास रहा है; कि इन वर्ग-संघर्षों का इतिहास अपने विकास क्रम की एक ऐसी मंजिल में पहुंच चुका है जहां शोषित तथा उत्पीड़ित वर्ग–सर्वहारा वर्ग–पूरे समाज को शोषण, उत्पीड़न, वर्ग विभेदों तथा वर्ग संघर्षों से सदा-सर्वदा के लिए मुक्त किये बिना उत्पीड़न तथा शोषण करने वाले वर्ग–पूंजीपति वर्ग के जुवे से अपने को मुक्त नहीं कर सकता।"** (1888 के अंग्रेजी संस्करण की भूमिका)

अब 'घोषणापत्र' की मूल अन्तर्वस्तु की कुछ विस्तार से चर्चा करेंगे।

"अभी तक आविर्भूत (कबायली आदिम समाज के विघटन के बाद से) समस्त समाज का इतिहास वर्ग-संघर्षों का इतिहास रहा है।" यहां से प्रारम्भ करते हुए 'घोषणापत्र' के रचयिताओं ने यह सिद्धान्त निरूपित किया है कि सभी वर्ग समाजों में अनिवार्यतः वर्ग-संघर्ष लगातार जारी रहता है और वही विकास की चालक शक्ति होता है। पुस्तक का पहला अध्याय **'बुर्जुआ और सर्वहारा'** इसी प्रश्न पर केन्द्रित है। मार्क्सवाद के प्रवर्तक यह दिखाते हैं कि शोषक समाजों के विकास और विनाश के जिस नियम का उन्होंने पता लगाया है वह पूंजीवादी समाज पर भी लागू होता है।

समाज विकास की गतिकी के आम नियमों को लागू करते हुए और अपने देश-काल की घटनाओं के सूक्ष्म अध्ययन एवं सामान्यीकरण के आधार पर मार्क्स-एंगेल्स ने पूंजीवादी समाज की उत्पत्ति एवं विकास पर प्रकाश डाला है तथा इसके उन अन्दरूनी अन्तरविरोधों को उजागर किया है जो इसे अनिवार्यतः विनाश की ओर अग्रसर करते हैं। उन्होंने बताया है कि विकास की एक खास मंजिल में पहुंचकर स्वामित्व के सामन्तवादी सम्बन्ध विकसित हो गई उत्पादक शक्तियों के अनुरूप नहीं रहे। **"उत्पादक को आगे बढ़ाने के बजाय वे उसे अवरुद्ध करते थे। वे बहुत सारी बेड़ियां बन गये। उन्हें तोड़ फेंकना आवश्यक हो गया और उन्हें तोड़ फेंका गया।"** इस तरह

पूंजीवादी समाज अस्तित्व में आया जिसमें शासक-शासित के रूप में दो ध्रुवों पर पूंजीपति और सर्वहारा खड़े होते हैं। पूंजीपति उत्पादन के सभी साधनों का मालिक होता है और उजरती मजदूर उनसे पूरी तरह वंचित होता है और जीने के लिए अपनी श्रम-शक्ति बेचता है।

पूंजीपति वर्ग ने सामन्तवाद के विरुद्ध संघर्ष में क्रान्तिकारी भूमिका निभाई थी और उससमय इतिहास-चक्र को आगे गति दी थी। मशीनों और फैक्टरियों के आविर्भाव के साथ उत्पादक शक्तियों का भव्य विकास हुआ और साथ ही बौद्धिक-वैचारिक प्रगति भी। पर विकास की एक निश्चित मंजिल पर पहुंचकर बुर्जुआ उत्पादन-सम्बन्ध उत्पादक-शक्तियों को और आगे विकसित करने में अक्षम और बाधक बन गये। कारखानों में हजारों-हजार मजदूरों को जमा करते हुए पूंजीवाद उत्पादन की प्रक्रिया को सामाजिक स्वरूप प्रदान करता है। किन्तु उत्पादन का सामाजिक स्वरूप यह मांग करता है कि उत्पादन-साधनों पर स्वामित्व भी सामाजिक हो, जबकि वह निजी ही बना रहता है। उत्पादन-साधनों पर निजी स्वामित्व उत्पादक शक्तियों के विकास की राह का रोड़ा बन जाता है।

उत्पादक शक्तियों और पूंजीवादी उत्पादन-सम्बन्धों के बीच अधिकाधिक उग्र होता अन्तरविरोध उन संकटों को जन्म देता है जो समय-समय पर पूंजीवादी समाज को झकझोरते रहते हैं। पूंजीपति वर्ग इनसे निजात पा ही नहीं सकता क्योंकि ये पूंजीवाद से अभिन्न रूप से जुड़ी उत्पादन की अराजकता का परिणाम होते हैं।

अन्ततोगत्वा सिर्फ सर्वहारा क्रान्ति ही उत्पादक शक्तियों की तबाही रोक सकती है, सभ्यता को विनाश से बचा सकती है और मानव जाति को उज्ज्वल भविष्य की ओर आगे बढ़ा सकती है। **यही सर्वहारा वर्ग का विश्व-ऐतिहासिक मिशन है** जिसे 'घोषणापत्र' में आगे तफसील से समझाया गया है।

पूंजीवादी समाज का सबसे अधिक उत्पीड़ित वर्ग होने के साथ ही सर्वहारा सर्वाधिक क्रान्तिकारी वर्ग भी होता है। बुर्जुआ वर्ग के साथ उसका संघर्ष विभिन्न चरणों से गुजरता हुआ अलग-थलग, स्वतःस्फूर्त संघर्ष की मंजिल से आगे ज्यादा से ज्यादा सचेतन व व्यापक वर्ग-संघर्ष बनता जाता है। *"प्रत्येक वर्ग-संघर्ष एक राजनीतिक संघर्ष होता है।"* यह समूचे पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध लक्षित होता है तथा उसके राज्य के विरुद्ध भी, जो *"पूरे पूंजीपति वर्ग के सम्मिलित हितों का प्रबन्ध करने वाली कमेटी के अलावा और कुछ नहीं है।"*

एक मंजिल पर पहुंचकर मजदूर वर्ग का संघर्ष क्रान्ति का रूप ले लेगा जिसमें सर्वहारा वर्ग पूंजीपति वर्ग को सत्ताच्युत करके अपना राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित करेगा। सर्वहारा इतिहास का एकमात्र ऐसा वर्ग है जो अपने को मुक्त करते हुए समस्त मानवजाति को भी हर तरह के शोषण से मुक्त करेगा। 'घोषणापत्र' का पहला अध्याय बुर्जुआ वर्ग के विरुद्ध इस कठोर ऐतिहासिक निर्णय के साथ समाप्त होता है :

"इस तरह आधुनिक उद्योग का विकास पूंजीपति वर्ग के पैरों के नीचे से उस जमीन को ही खिसका देता है जिसके आधार पर वह उत्पादन करता है और पैदावार को हड़प लेता है। अतः पूंजीपति वर्ग सर्वोपरि अपनी कब्र खोदने वालों को पैदा करता है। उसका पतन और सर्वहारा वर्ग की विजय दोनों समान रूप से अनिवार्य हैं।"

'घोषणापत्र' के दूसरे अध्याय **'सर्वहारा और कम्युनिस्ट'** में सर्वहारा पार्टी की स्थापना की आवश्यकता, इसकी भूमिका, ध्येय और कार्यभार समझाये गये हैं। यहां मार्क्स-एंगेल्स ने सर्वहारा पार्टी विषयक अपनी शिक्षा की नींव रखी है जिसे वे लगातार आगे विकसित करते रहे और जिसे और अधिक उन्नत मंजिल पर ले जाकर **लेनिन** ने वर्तमान सदी के प्रारम्भ में **बोल्शेविक पार्टी** की स्थापना की।

घोषणापत्र के शब्दों में, कम्युनिस्ट *"हर देश की मजदूर पार्टियों के सबसे उन्नत और कृतसंकल्प हिस्से होते हैं, ऐसे हिस्से जो औरों को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं; दूसरी ओर, सैद्धान्तिक दृष्टि से, वे सर्वहारा वर्ग के विशाल जन-समुदाय की अपेक्षा इस अर्थ में श्रेष्ठ हैं कि वे सर्वहारा आन्दोलन के आगे बढ़ने के रास्ते की, उसके हालात और साधारणतः उसके अन्तिम नतीजे की सुस्पष्ट समझ रखते हैं।"*

पूंजीवादी भाड़े के टट्टू मार्क्स के समय से लेकर आजतक शहर-देहात के मध्यम वर्गीय लोगों और किसानों को कम्युनिज्म के खिलाफ भड़काते रहते हैं कि स्वामित्व खत्म करने के नाम पर कम्युनिस्ट उन सबकी सम्पत्ति का अपहरण कर लेंगे। मार्क्स-एंगेल्स ने तीखे व्यंग्य के साथ इस फरेब का पर्दाफाश करते हुए कहा है कि छोटे मालिकाने को कम्युनिज्म नहीं बल्कि पूंजीवाद और बड़े उद्योगों का विकास ही क्रमशः तबाह कर डालता है। कम्युनिस्ट आधुनिक पूंजीवादी निजी स्वामित्व को नष्ट करना चाहते हैं, आम तौर पर स्वामित्व को नहीं। वे समाजवादी स्वामित्व के रूपों को कायम करना चाहते हैं। उजरती श्रम श्रमजीवी के लिए कोई सम्पत्ति नहीं बल्कि पूंजी पैदा करता है। पूंजी एक सामूहिक उपज, एक सामाजिक शक्ति होती है जो पूंजीपति के कब्जे में होती है। *"इसलिए पूंजी जब आम स्वामित्व बना दी जाती है, जब उसे समाज के तमाम सदस्यों के स्वामित्व का रूप दे दिया जाता है, तब वैयक्तिक स्वामित्व सामाजिक स्वामित्व में नहीं बदल जाता। तब स्वामित्व का केवल सामाजिक रूप बदल जाता है। उसका वर्ग-रूप मिट जाता है।"*

कम्युनिस्टों पर पूंजीवाद के प्रचारक यह लांछन लगाते हैं कि वे व्यक्ति की स्वतंत्रता समेत हर तरह की स्वतंत्रता मिटाना चाहते हैं। इसका खण्डन करते हुए मार्क्स-एंगेल्स बताते हैं कि पूंजीवाद के अन्तर्गत व्यक्ति की स्वतंत्रता का अर्थ सिर्फ खरीद-फरोख्त की स्वतंत्रता होता है; *"बुर्जुआ समाज में पूंजी स्वतंत्र है और उसका व्यक्तित्व होता है, किन्तु जीवित व्यक्ति परतंत्र है और उसका कोई व्यक्तित्व नहीं होता।"*

"फिर भी पूंजीपति वर्ग कहता है कि इस परिस्थिति को खत्म कर देने का मतलब

व्यक्तित्व और स्वतंत्रता को खत्म कर देना है। और यह ठीक ही है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हम बुर्जुआ व्यक्तित्व, बुर्जुआ स्वतंत्रता और बुर्जुआ स्वाधीनता को जड़-मूल से खत्म कर देना चाहते हैं।"

पूंजीवादी शोषण-उत्पीड़न का नाश करके ही व्यक्ति की सच्ची स्वतंत्रता सुनिश्चित की जा सकती है।

आगे मार्क्स-एंगेल्स पाखण्डपूर्ण, घिनौनी पूंजीवादी नैतिकता का तीखे व्यंग्य के साथ पर्दाफाश करते हुए बताते हैं कि वह महज **"सोने की खनक"** में ही सिमटी होती है। वे बताते हैं कि कम्युनिज्म की नैतिकता ही समतामूलक समाज की सच्ची मानवतावादी, वैज्ञानिक, स्वार्थमुक्त नैतिकता हो सकती है।

बुर्जुआ राष्ट्रप्रेम और "मातृभूमि-प्रेम" का अभिप्राय स्पष्ट करते हुए 'घोषणापत्र' बताता है कि पूंजीपतियों और उनके विचारकों का राष्ट्रवाद बाजार में जन्मा होता है, "मातृभूमि की रक्षा" के झूठे नारे की आड़ में वे दूसरे देशों पर कब्जा करने और दूसरे जनगण को दास बनाने की ओर लक्षित लुटेरे युद्ध चलाते हैं। *"श्रमजीवियों का कोई स्वदेश नहीं है। जो उनके पास है ही नहीं उसे उनसे कौन छीन सकता है? चूंकि सर्वहारा वर्ग को सबसे पहले राजनीतिक प्रभुत्व प्राप्त करना है, राष्ट्र में प्रधान वर्ग का स्थान ग्रहण करना है, खुद अपने को राष्ट्र के रूप में संगठित करना है, अतः इस हद तक वह स्वयं राष्ट्रीय चरित्र रखता है, गोकि इस शब्द के पूंजीवादी अर्थ में नहीं।"*

साथ ही, राष्ट्रीय प्रश्न पर नकारात्मक रुख से दूर रहते हुए 'घोषणापत्र' में कहा गया है: *"पूंजीपति वर्ग के खिलाफ सर्वहारा वर्ग का संघर्ष, यद्यपि अन्तर्वस्तु की दृष्टि से नहीं, तथापि रूप की की दृष्टि से शुरू में राष्ट्रीय संघर्ष होता है। हर देश के सर्वहारा वर्ग को, जाहिर है, पहले अपने ही पूंजीपतियों से निबटना होगा।"*

'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' में मार्क्सवादी सिद्धान्त के एक सबसे बुनियादी तत्व सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयतावाद का भी स्पष्ट प्रतिपादन किया गया है। मार्क्स-एंगेल्स के अनुसार, सर्वहारा की विजय के साथ ही हर तरह की जातीय फूट का, एक राष्ट्र द्वारा दूसरे को दास बनाये जाने के सिलसिले का और मानवता पर युद्धों द्वारा लादी जाने वाली विपदाओं-यातनाओं का भी अन्त हो जायेगा।

राजनीतिक सत्ता-प्राप्ति के बाद सर्वहारा वर्ग के आम कार्यभारों को 'घोषणापत्र' इन शब्दों में निरुपित करता है: *"सर्वहारा वर्ग अपना राजनीतिक प्रभुत्व पूंजीपति वर्ग से धीरे-धीरे कर सारी पूंजी छीनने के लिए, उत्पादन के सारे औजारों को राज्य, अर्थात शासक वर्ग के रूप में संगठित सर्वहारा वर्ग, के हाथों में केन्द्रीकृत करने के लिए तथा समग्र उत्पादक शक्तियों में यथाशीघ्र वृद्धि के लिए इस्तेमाल करेगा।"*

यह इंगित करते हुए कि 'घोषणापत्र' की इस प्रस्थापना में राज्य के प्रश्न पर मार्क्सवाद का सर्वाधिक बुनियादी और सर्वाधिक अनूठा सिद्धान्त निरूपित किया गया है, **लेनिन** ने उसे इन शब्दों में स्पष्ट किया है : **"'राज्य, अर्थात शासक वर्ग के रूप**

में संगठित सर्वहारा वर्ग'—यही सर्वहारा अधिनायकत्व है।"

यद्यपि "सर्वहारा अधिनायकत्व" शब्दों का 'घोषणापत्र' में उपयोग नहीं हुआ था, तथापि यह धारणा यहां पहली बार ठोस रूप में प्रकट हुई। इसे मार्क्स-एंगेल्स ने अपनी आगे की रचनाओं में क्रमशः ज्यादा से ज्यादा स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया। उनके अनुसार, शोषकों के प्रतिरोध को कुचलने के लिए और कम्युनिज्म की दिशा में यात्रा को जारी रखने के लिए राज्य के एक संक्रमणकालीन रूप के तौर पर एक लम्बी अवधि तक सर्वहारा को अपना अधिनायकत्व लागू करना होगा। यह बुर्जुआ तत्वों पर अंकुश लगायेगा और सम्पूर्ण मेहनतकश जनता के जनवाद पर आधारित अबतक की सारी सत्ताओं से अधिक जनवादी होगा।

भावी कम्युनिस्ट समाज की आम रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए 'घोषणापत्र' बताता है कि इस समाज में उत्पादक शक्तियों के विकास के मार्ग में कोई बाधाएं नहीं होंगी, और, परिणामतः उसकी कोई सीमा भी नहीं होगी। हर तरह के शोषण और उत्पीड़न से मुक्ति व्यक्ति और समाज की सामंजस्यपूर्ण एकता के लिए, व्यक्ति की सच्ची स्वतंत्रता और मानव के चहुंमुखी विकास के लिए भौतिक आधार बनेगी।

"वर्ग और वर्ग-विरोधों से बिंधे पुराने पूंजीवादी समाज के स्थान पर एक ऐसे संघ की स्थापना होगी जिसमें व्यष्टि की स्वतंत्र प्रगति समष्टि की स्वतंत्र प्रगति की शर्त होगी।"

'घोषणापत्र' के तीसरे अध्याय में समाजवाद के नाम पर तत्कालीन यूरोप में प्रचारित भांति-भांति की गैर सर्वहारा शिक्षाओं की आलोचना प्रस्तुत की गई है। यद्यपि ये विचार आज मर चुके हैं, पर सैद्धान्तिक दृष्टि से इनकी आलोचना आज भी सही और उपयोगी है क्योंकि आज भी भारत और अन्य तमाम देशों के बुर्जुआ वर्ग के कुछ सुधारवादी धड़े ऐसे भांति-भांति के "समाजवाद" का झण्डा लहराते रहते हैं और आम जनता को गुमराह करते रहते हैं।

'घोषणापत्र' में आलोचनात्मक-काल्पनिक समाजवाद और कम्युनिज्म का गहन द्वंद्वात्मक मूल्यांकन किया गया है। अपने समय में पूंजीवादी समाज की तीव्र आलोचना करते हुए **सेंट साइमन, फूरिए, ओवेन** आदि ने जो भूमिका अदा की, उसका मार्क्स-एंगेल्स ऊंचा मूल्यांकन करते हैं। किन्तु काल्पनिक समाजवाद चूंकि वर्गों से ऊपर उठने की कोशिश करता है तथा राजनीतिक संघर्ष और हर तरह की क्रान्तिकारी कार्रवाई के प्रति नकारात्मक रुख अपनाता है, अतः ज्यों-ज्यों मजदूर आन्दोलन आगे बढ़ता है और वर्ग-संघर्ष तीखा होता जाता है, त्यों-त्यों काल्पनिक समाजवाद अपनी सकारात्मक भूमिका खोकर प्रतिगामी बनता जाता है।

'वर्तमान काल की विभिन्न विरोधी पार्टियों के सम्बन्ध में कम्युनिस्टों की स्थिति' शीर्षक 'घोषणापत्र' का चौथा अध्याय तफसील के नजरिए से हालांकि उतना प्रासंगिक नहीं है, लेकिन इसमें उल्लिखित कम्युनिष्टों की कार्यनीति के सैद्धान्तिक

मूलाधार आज भी प्रासंगिक हैं। विशेष तौर पर ये पंक्तियां आज भी हमारे लिए मार्गदर्शक का काम करती हैं : *"कम्युनिस्ट मजदूरों के तात्कालिक लक्ष्यों के लिए लड़ते हैं, उनके सामयिक हितों की रक्षा के लिए प्रयत्न करते हैं, किन्तु वर्तमान के आन्दोलन में वे इस आन्दोलन के भविष्य का भी प्रतिनिधित्व करते हैं और उसका ध्यान रखते हैं।"*

अन्त में 'घोषणापत्र' इन शब्दों में सर्वहारा क्रान्ति का खुला, ओजस्वी, और गर्वपूर्ण आह्वान करता है :

"कम्युनिस्ट क्रान्ति के भय से शासक वर्ग कांपते हैं तो कांपें! सर्वहाराओं के पास खोने के लिए अपनी बेड़ियों के सिवा कुछ नहीं है। जीतने के लिए उनके सामने सारी दुनिया है।

दुनिया के मजदूरो, एक हो!"

'घोषणापत्र' का उद्‌घोष अमर है!
स्वर्ग पर फिर से धावा बोला जायेगा!!

उपरोक्त महान उद्‌घोष को आज डेढ़ सौ वर्ष गुजर चुके हैं। सर्वहारा क्रान्ति ने इस दौरान डग भरते हुए पूरी दुनिया और एक पूरे युग को नाप डाला है तथा चार महान क्रान्तियों—**पेरिस कम्यून (1871), सोवियत क्रान्ति (1917), चीनी नई जनवादी क्रान्ति (1949) और चीन की महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति (1966-76)** के रूप में इतिहास में चार मील के पत्थर स्थापित किये हैं जो सर्वहारा शौर्य और कम्युनिज्म के कीर्तिस्तम्भ के रूप में विश्व-पूंजीवाद की छाती पर खड़े हैं।

इस सदी के प्रारम्भ में वित्तीय पूंजी के प्रभुत्व के साथ पूंजीवाद के विश्वव्यापी प्रसार और विकास की चरम अवस्था का नया दौर शुरू हुआ, जिसे **लेनिन** ने व्याख्यायित किया और **साम्राज्यवाद** नाम दिया। उन्होंने विश्व सर्वहारा क्रान्ति की नई आम दिशा पेश की और बताया कि क्रान्तियों के तूफान के केन्द्र अब पिछड़े देशों में खिसक आये हैं। अक्टूबर क्रान्ति के बाद समाजवाद ने 1917 से 1953 तक 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' में निरूपित सिद्धान्तों को सिद्ध किया और आगे विस्तार दिया। **चीन** में **माओ त्से-तुङ** ने **नई जनवादी क्रान्ति** के बाद समाजवादी निर्माण को आगे गति दी और **सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति** के दौरान ये सिद्धान्त विकसित किये कि पूंजीवादी पुनर्स्थापना के खतरों को समाप्त करके समाजवाद कम्युनिज्म की मंजिल तक किस प्रकार आगे बढ़ेगा!

पूरे विश्व में इस दौरान जारी वर्ग संघर्ष 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' में निरूपित सिद्धान्तों को सत्यापित करते रहे। राष्ट्रीय मुक्ति-युद्धों की जीत ने उपनिवेशवाद-नवउपनिवेशवाद के दौरों को समाप्त कर दिया। वियतनाम, कोरिया, क्यूबा आदि कई देशों में ये मुक्ति

युद्ध सर्वहारा पार्टियों की अगुवाई में लड़े गये और अन्यत्र भी सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टियों की भूमिका अहम रही। सोवियत सेना के हाथों दूसरे विश्वयुद्ध में फासीवाद की पराजय और पूर्वी यूरोप में सर्वहारा सत्ताओं की स्थापना ने सर्वहारा वर्ग की शक्ति से पूरी दुनिया को परिचित करा दिया।

विश्व-पूंजीवाद ने अपनी समग्र भौतिक-बौद्धिक शक्ति लगाकर फिलहाल समाजवादी क्रान्तियों को विफल कर दिया है। इसमें समाजवादी समाज और सर्वहारा पार्टियों के भितरघातियों ने अहम भूमिका निभाई है। **पर यह हार अन्तिम नहीं है। जैसा कि इतिहास में पूर्ववर्ती क्रान्तियों के साथ हुआ है, सर्वहारा क्रान्ति के भी नये संस्करण अवश्यम्भावी हैं।**

आर्थिक नवउपनिवेशवाद के दौर में विश्व पूंजीवाद के चतुर्दिक, सर्वव्यापी, ढांचागत, अन्तकारी, असमाधेय संकट यही बता रहे हैं कि पूंजीवाद अजर-अमर नहीं है। इतिहास का अन्तिम शोषक वर्ग आज वर्ग-समाज के सीमान्तों पर खड़ा मेहनतकश अवाम पर हर तरह का कहर बरपा कर रहा है, पर साथ ही वह दुनिया के कोने-कोने से उठ रहे जनसंघर्षों और क्रान्तिकारी सर्वहारा के हिरावल दस्तों के फिर से संगठित होने की कोशिशों से भयाक्रान्त भी है।

सर्वहारा वर्ग के लिए आज भी यह आह्वान सर्वथा प्रासंगिक है कि 'कम्युनिस्ट क्रान्ति के भय से शासक वर्ग कांपते हैं तो कांपें! सर्वहाराओं के पास खोने के लिए अपनी बेड़ियों के सिवा कुछ नहीं है। जीतने के लिए उनके सामने सारी दुनिया है।'

'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' आज भी दुनिया के मजदूरों की पूंजीवाद-विरोधी विश्व ऐतिहासिक महाक्रान्ति का घोषणापत्र है।

'घोषणापत्र' के प्रकाशन की डेढ़ सौवीं जयन्ती हमें अपने शौर्यपूर्ण अतीत की विस्मृति के विरुद्ध संघर्ष के लिए, अपने वर्तमान, भविष्य और कल्पनालोक की मुक्ति के लिए ललकार रही है तथा 'स्वर्ग' पर फिर से धावा बोलने के लिए आह्वान कर रही है।

हमें अपने संकल्पों को फौलादी बनाना है और नई मजूदर क्रान्ति के रणघोष से पूरे भूमण्डल को एक बार फिर कंपा देना है। ▣

('बिगुल', फरवरी 1998 और मार्च-अप्रैल 1998 में दो किस्तों में प्रकाशित)

• • •